शिवाजी

[प्रेरणापूर्ण ऐतिहासिक जीवन-चरित्र]

भीमसेन विद्यालंकार

राजपाल एण्ड सन्ज़, कश्मीरी गेट, दिल्ली

मूल्य : तीन रुपये

पांचवां संस्करण : १९६६

SHIVAJI By Bhimsen Vidyalankar
Biography 3·00

क्रम

शिवाजी : पूर्व परिचय

मातृमान् पुरुषो वेद

पंचमी का उत्सव है। बीजापुर-दरबार के सरदार पंचमी का पर्व मनाने के लिए आपस में एक-दूसरे के घरों पर एकत्र होने लगे। मालोजी भोंसले अपने पुत्र शाहजी के साथ जाधवराव के घर पर उपस्थित हुए। जाधवराव अपनी कन्या के साथ रंगपंचमी के त्योहार में सम्मिलित हुए। चारों ओर आमोद-प्रमोद का वातावरण था। छोटे-बड़े रंग-गुलाल उड़ाकर अपनी थकान दूर कर रहे थे। युवकगण स्फूर्तिमयी क्रीड़ाओं में मग्न थे। वृद्ध सज्जन पास बैठी तरुण-मंडली को आपबीती-जगबीती घटनाएं सुना रहे थे। बालक बालकों के साथ खेल-कूद में मग्न थे। बाल-लीलाओं को देखकर वृद्ध, युवा, सभी प्रसन्न हो रहे थे। इतने में शाहजी और जीजाबाई भी स्वभाव-सुलभ चंचलता तथा आकर्षण से आपस में खेलने लगे। उनको खेलते-कूदते देखकर जाधवजी के मुह से सहसा यह उद्गार निकला, "क्या सुन्दर युगल जोड़ी सोहती है?" इस उद्गार को सुनते ही मालोजी ने मंडली में खड़े होकर कहा कि आज से जाधोजी हमारे समधी हुए। खेलकूद में दो वंशों का गठबन्धन हो गया। जाधोजी इस बात को सुनकर हैरान हो गए। परन्तु अब इस हृदयोद्‌गार—स्वाभाविक भाव-प्रकाशन—को कैसे लौटाएं? जाधोजी अपने आपको ऊंचे कुल का समझते थे, मालोजी को हीन वंश का। अब उन्हें इस प्रस्तावित सम्बन्ध के विषय में संकोच होने लगा। इधर मालोजी भोंसले ने इस सम्बन्ध को नियामक रूप देने का आग्रह करना शुरू किया। धीरे-

बाई और शम्भूजी का परित्याग कर दिया। जाधोजी यथाशक्ति शाहजी को चैन न लेने देते थे। शाहजी को नीचा दिखाने के लिए जीजाबाई के पिता मुगल दरबार से जा मिले। उधर मुगलों के आक्रमण से अहमदनगर की निजामशाही को बचाने के लिए शाहजी यत्न करने लगे। शाहजी जीजाबाई को उत्तर की ओर कोंकण प्रदेश में दादाजी कोंडदेव की रक्षा में शिवनेरी किले में भेज स्वयं सांसारिक महत्वाकांक्षा को पूरा करने के लिए दक्षिण भारत की मुसलमानी बादशाहियों में संधिचक्र तथा युद्धचक्रों का संचालन कर जीवन-यात्रा व्यतीत करने लगे। इन्हीं दिनों इस भागदौड़ मे जीजाबाई को पतिदेव के राजनीतिक संधिचक्रों के जोड़तोड़ के कारण स्थान-स्थान पर भटकना पड़ा। वह अपने आराम-उपभोग के लिए पतिदेव को छोड़कर पितृगृह में जा सकती थी, परन्तु आर्यसंस्कृति तथा आर्यजाति की पवित्र मर्यादा के अनुसार वह पतिगृह को न छोड़ना चाहती थी।

इन अमंगल और अनर्थ की परम्पराओं से अपनी सन्तान की रक्षा के लिए वह अपने इष्टदेव शिव का चिन्तन-स्मरण करने लगी, और पतिदेव की इच्छानुसार शिवनेरी किले में सन्तान-प्राप्ति की प्रतीक्षा में दिन बिताने लगी। १६२७ ई० के १० अप्रैल को बालक ने जन्म लिया। इष्टदेव 'शिव' की स्मृति में इसका नाम भी शिवाजी रखा गया। पौराणिक दन्तकथाओं में आता है कि दक्ष प्रजापति और शिव के पारस्परिक संघर्ष में, पार्वती ने अपने पूजनीय पिता दक्ष प्रजापति का साथ देने के स्थान पर पतिदेव के साथ तपस्या का जीवन व्यतीत किया और पतिव्रत धर्म के प्रभाव से राक्षस-संहारी पुत्र को जन्म दिया। जीजाबाई दिन-रात इन दिनों पतिदेव के युद्धचक्रों तथा नीतिचक्रों की चिन्ता में लगी रहती थी। नैपोलियन की वीरमाता ने गर्भदशा में नैपोलियन को वीरप्रकृति, युद्धविजेता बनाया था। अभिमन्यु की माता सुभद्रा ने अभिमन्यु को गर्भदशा में, पतिदेव से व्यूहचक्र की

धीरे यह बात बीजापुर-दरबार तक पहुंची । बीजापुर-दरबार के दरबारियों ने वाग्दान-वचन को निभाने की कोशिश की । दरबार ने मालोजी की स्थिति को उन्नत तथा जाधोजी के बराबर करने के लिए उन्हें जागीरें तथा सरकारी ग्रोहदे भी दिए । दरबार ऐश्वर्य दे सकता था परन्तु जाधोजी के जन्म-कुलाभिमान की ग्रहंकारमयी ज्वाला को शांत करने के लिए उसके पास कोई साधन न था । महाराष्ट्र के घर-घर में इसकी चर्चा होने लगी । लोकमत ने जाधोजी को वचन-पालन के लिए बाधित किया । शुभ मुहूर्त (१६०४ ई०) में शाहजी ग्रौर जीजाबाई का विवाह-सम्बन्ध हो गया । लोकाचार पूरे किए गए । परन्तु जाधोजी के जन्म-कुलाभिमान को इससे जो ठेस लगी, उससे वे दिल ही दिल में मालोजी से खलने लगे । पुत्री का प्रेम भी उनके हृदय को शान्त न कर सका । वह यथाशक्ति मालोजी भोंसले ग्रौर शाहजी को नीचा दिखाने का ग्रवसर ढूंढ़ते । जीजाबाई इस स्थिति को देखकर हैरान थी । कुलाभिमानी जाधवजी ने जन्माभिमान की ऐंठ में ग्रपनी पुत्री के—ग्रपने हृदय की सार-प्रतिमा के—कष्ट ग्रौर पीड़ा की भी परवाह नहीं की । शाहजी जाधवजी के संधिवकों से परेशान हो इधर-उधर भटकने लगे । उनके साथ गर्भवती जीजाबाई भी थी । शाहजी जीजाबाई को ग्रपनी ग्रापत्तियों का मूल कारण समझकर उसके प्रति उदासीन रहने लगे । पति ग्रौर पिता के तिरस्कारपूर्ण व्यवहार से खिन्न जीजाबाई के हृदय को ढाढ़स बंधानेवाला कोई न था । पति-पत्नी के स्नेह-सम्बन्ध को दृढ़ करनेवाली सन्तान, शम्भूजी के नाम से १६२३ ई० में पैदा हुई । यह ग्रपत्य सम्बन्ध भी शाहजी को जीजाबाई का ग्रनुरागी न बना सका । (प्रचलित दन्तकथाग्रों के ग्रनुसार जीजाबाई का बड़ा लड़का शम्भूजी कनकगिरि में मारा गया ।) इसके बाद शाहजी के हृदय में लखूजी जाधव ग्रौर उसके परिवार के लिए घृणा का भाव गहरा हो गया । उन्होंने समझा कि जाधव की कन्या का पुत्र उसके किसी काम न ग्राएगा । उन्होंने जीजा-

भांति आवश्यकतानुसार सन्धिचर्चों तथा छलयुद्धों में विजयी होने के लिए शिवाजी को शिक्षित किया। कोई ब्राह्मण शिवाजी को छोटी जाति का होने से मन्त्रदीक्षित करने को तैयार न था, परन्तु माता की लोरियों की वीर-रसोत्तेजक शिक्षा ने इस पुत्र की मन्त्र-शिक्षण की कमी को पूरा किया। जीजाबाई एकान्त में, जन समुदाय में, सब जगह होनहार वीर शिवाजी को लिए विचरने लगी। शिवाजी के बालसखा भक्त-गुणों से आकृष्ट हुए चारों ओर इकट्ठे होने लगे।

इतने में समाचार मिला कि शाहजी को बीजापुर-दरबार ने उनकी वीरता और योग्यता पर प्रसन्न होकर पूना और सूपा को जागीर दी है। शाहजी ने अपना कार्यक्षेत्र कर्नाटक को बनाया। अपनी नवविवाहिता पत्नी के साथ उधर ही रहने का विचार किया। जीजाबाई और उसके पुत्र शिवाजी को पूना व सूपा को जागीर निर्वाह के लिए देने का सकल्प किया। दादाजी कोंडदेव को इसका प्रबन्ध करने के लिए नियत किया। पूना-सूपा की जागीर शिवाजी के नाम कराने के लिए शिवाजी को बीजापुर-दरबार में बुला भेजा। जीजाबाई भी पतिदेव के दर्शनों के लिए पुत्र के साथ बीजापुर पहुची। चिरप्रतीक्षा के बाद आर्यदेवी पुत्रसहित पतिदेव के चरणों में उपस्थित हुई। श्रद्धा और भक्ति के भाव प्रकट करने की उत्कंठा थी। परन्तु शाहजी ने जीजाबाई को कहा कि तुम यहा क्यों आई? माता तथा पुत्र पिता के इस भाव को देखकर चकित हो गए। माता के लाड़ले, शिवाजी के हृदय में माता के इस अपमान को देखकर ग्लानि और विद्रोह के भाव पैदा हुए। शाहजी बीजापुर दरबार की कृपा की चाह में अपने कर्तव्य को भूल गए। जीजाबाई ने पुत्र को शान्त किया। परन्तु माता के अपमान को वीरपुत्र कैसे भूलता? शाहजी ने जीजाबाई और शिवाजी को कुछ दिनों के लिए बीजापुर में रहने के लिए कहा। मौका देखकर पूना-सूपा की जागीर शिवाजी के नाम कराने के लिए शिवाजी को बीजापुर-दरबार में उपस्थित

कहानियां सुनते-सुनते व्यूहचक्र को भेद करने का रहस्य सिखाया था। जीजाबाई ने भी अपने पुत्र शिवाजी को गर्भ-दशा से ही क्षात्रधर्म का पाठ पढ़ाया। पति और पिता के संघर्ष से खिन्न और उद्विग्न जीजाबाई को पुत्र का आश्रय मिला। अपनी शक्ति, अपना ध्यान पुत्र पर केन्द्रित किया। पतिदेव तथा पितृदेव दोनों की स्मृति में शिव-अर्चना करने लगी। साक्षात् शिव का अवतार समझकर पुत्र को अपने संकटों को दूर करने वाला स्वीकार किया। अपने संकटों के मूल कारणों को दूर करने के लिए संस्कार, वासना तथा भावनाओं द्वारा उसे शिक्षित तथा संस्कृत करने का संकल्प किया। शाहजी ने इन्हीं दिनों दीपाबाई नाम की देवी से दूसरा विवाह किया। जीजाबाई के प्रति उपेक्षा तथा उदासीनता की भावना पराकाष्ठा को पहुंच गई। इस विवाह द्वारा उसने जाधवराव की पुत्री की अन्तरात्मा को क्लेशित कर जाधवराव के प्रति द्वेषभाव को मूर्तरूप दिया।

पुरुष-जाति के स्वार्थमय, सामाजिक ऊंच-नीच के इस कुपरिणाम को जीजाबाई ने देखा और अपना सर्वस्व लुटाकर इसे दूर करने का सकल्प किया। शिवाजी भी पिता द्वारा, पुरुष-जाति द्वारा किए गए मातृशक्ति के अपमान को देखकर सिहर उठा। उसके तरुण हृदय में उस समय की पुरुष-जाति तथा सामाजिक ऊंच-नीच के प्रति विद्रोह का भाव प्रबलता के साथ जाग उठा। माता और पुत्र एक ही व्रत में दीक्षित होकर सकल्प-पूर्ति के लिए अपने-आपको तैयार करने लगे। जीजाबाई ने रामायण और महाभारत की कथाएं सुनाकर उसे युद्धचक्रों तथा सधिचक्रों की शिक्षा देनी आरम्भ की। शिवाजी के हृदय में, राम की भांति वानर-जाति के वीर पुरुषों के उत्तराधिकारी, पर्वतों तथा कोंकण की घाटियों में विचरने वाले मावलियों को अपनाने की प्रेरणा हुई। शिवाजी इनमें खेलने लगा। इन्हें बालसखा बनाया। ये सब वीर भी जीजाबाई को माता की तरह पूजने लगे। जीजाबाई ने महाभारत की कथाएं सुनाकर श्रीकृष्ण की

क्या आज कोई वीरमाता अपने पुत्र को इस प्रकार विदा करने को तैयार है ? माता का आशीर्वाद लेकर शिवाजी मृत्यु को निमन्त्रण देने उपस्थित हुए। माता के आशीर्वाद ने जादू का सा असर किया। माता के आशीर्वादरूपी अभेद्य कवच पर शत्रु का वार बेकार रहा।

शिवाजी महाराज मिर्ज़ा जयसिंह की प्रेरणा तथा आश्वासन पर औरंगज़ेब के दरबार में उपस्थित होने के लिए आगरा जाने के लिए तैयार हो रहे हैं। तरुण-मंडली तथा शिवाजी के बालसखा और मंत्रि-मंडल चिन्तित हैं कि पता नहीं औरंगज़ेब क्या करे ? पीछे महाराष्ट्र के शासन-चक्र का संचालन कैसे हो ? शिवाजी के व्यक्तित्व के स्थान पर किसका व्यक्तित्व सारे मराठा-मंडल को एक सूत्र में संगठित करेगा ? वीरपुत्र ने माता के सामने यह समस्या उपस्थित की। जीजाबाई ने पुत्र का प्रतिनिधि होकर शासन-सूत्र की बागडोर संभाली और शिवाजी को अमर आशीर्वाद के साथ मृत्यु के मुंह में औरंगज़ेब की छल-शाला में, जाने के लिए उत्साहित तथा सावधान किया। केवल पुत्र को ही नहीं, अपने पुत्र के पुत्र को भी साथ भेजा ! क्या आज कोई वीरदेवी अपने प्राणसार को—अपने हृदय के सार पुत्र को—इस प्रकार राष्ट्रीय कार्य के लिए सकटपूर्ण मार्ग का राही बनाने को तैयार है ? जीजाबाई ने अपने हृदय के टुकड़ों को महाराष्ट्रीय जनता की स्वाधीनता की जलती भट्टी में भेंटकर, शिवाजी के बालसखाओं तथा साथियों को भारी से भारी बलिदान देने के लिए उतावला कर दिया।

मुगल-दरबार के समाचार महाराष्ट्र में पहुंचे। शिवाजी पुत्रसहित औरंगज़ेब का कैदी बन गया। जीजाबाई विचलित न हुई। उनके व्यक्तित्व ने महाराष्ट्र को विशीर्ण न होने दिया. राजमाता की आज्ञाओं को जनता ने सिर-माथे पर स्वीकार किया। राजगढ़ का किला है। राजमाता किले में बैठी है। किले के पहरेदारों ने राज-

किया

शिवाजी का मन माता के अपमान से अशान्त था। उन्होंने दरबार में उपस्थित होकर बादशाह को 'मुजरा' आदि न किया। शाहजी ने 'बालक नाबालिग है' कहकर बादशाह को शान्त किया। जीजाबाई की छत्रछाया तथा लोरियों में पलने वाले वीर शिवाजी 'नाबालिग' नहीं थे। उन्होंने समझ लिया कि इन जागीरों तथा बादशाही कृपाओं की चाह में ही उसके पिता दर-ब-दर भटककर उसकी माता की उपेक्षा कर रहे हैं। दरबार की रौनक समाप्त हुई। जीजाबाई विद्रोही पुत्र के साथ पूना-सूपा को वापिस आई। रास्ते में शिवाजी माता के साथ बीजापुर-दरबार की तथा उस समय की स्थिति को बदलने के लिए भांति-भांति के मनोरथ बनाते हुए वापस आए। जीजाबाई ने शिवाजी के साथ बीजापुर जाकर उन्हें स्थिति की भयंकरता का साक्षात् अनुभव कराया। इसने उनके हृदय में प्रज्वलित विद्रोह की आग को और भी प्रदीप्त किया। इस तरह भविष्य में स्वदेशी तथा विदेशी सब अत्याचारियों को भस्मसात् कर महाराष्ट्र में जनता का राज्य स्थापित करने की भूमिका बांधी गई।

शिवाजी की स्वच्छन्द क्रियाओं, स्वेच्छाचारिता तथा उथल-पुथल से बीजापुर-दरबार तंग हो गया। दरबार ने अफ़ज़लखां को उनका दमन करने के लिए भेजा। वह भारी सेना के साथ शिवाजी का सिर कुचलकर छल-नीति का प्रयोग करने के लिए उद्यत हुआ। जीजाबाई को इस आने वाले संकट का पता लगा। शिवाजी जीजाबाई के चरणों में उपस्थित हुए। जीजाबाई ने 'व्रजन्ति ते मूढधियः पराभवं, भवन्ति मायाविषु ये न मायिनः'[1] का उपदेश देकर शिवाजी को छलनीति का आश्रय लेने के लिए प्रेरित किया। अपने पुत्र को अपने हाथों बघनखा, कवच तथा लोहे की टोपी पहनाकर विदा किया।

---

१. जो लोग संसार-यात्रा में धोखेबाजों के कपट का छल-कपट से मुकाबला नहीं करते, वे पराजित होते हैं।

बाई को इससे सन्तोष न हुआ। विवाह-सम्बन्ध के बिना इस प्रकार के संस्कार क्षणिक प्रभाव पैदा करते हैं। जीजाबाई ने अपनी पोती, शिवाजी की पुत्री व शम्भाजी की बहिन सुखुबाई का विवाह बाजाजी निम्बालकर के पुत्र महाराजी के साथ सन् १६५७ में कर दिया। आज आर्यजाति की देवियां अपनी संकीर्णता तथा रूढिप्रियता के कारण आर्यजाति में सम्मिलित होनेवाले लाखों आर्यसन्तानों को कुलाभिमान तथा जन्माभिमान के कारण तिरस्कृत कर रही हैं। जीजाबाई ने इस कार्य द्वारा महाराष्ट्र की जनता के सामने यथार्थ में अपने-आपको राजमाता के रूप में उपस्थित किया। शिवाजी के बालसखा, छोटे-बड़े जन्ममूलक ऊंच-नीच आदि के भेदभाव को छोड़कर, जीजाबाई को राजमाता एवं राष्ट्रमाता के रूप में पूजने लगे।

शिवाजी के राज्याभिषेक की तैयारियां हो रही है। विविध देशों के राजदूत शिवाजी से भेंट करना चाहते हैं। परन्तु शिवाजी राज्याभिषेक-समारोह में सम्मिलित होने से पूर्व स्वामी गुरु रामदास और जीजाबाई की सेवा में उपस्थित होकर आशीर्वाद प्राप्त कर रहे हैं। आज का दृश्य स्वर्णिम है। जागीरदार की कन्या जीजाबाई को सारा जीवन, युवावस्था की उमंग-भरी रातें, मुसीबतों में बितानी पड़ी थीं परन्तु आज उसकी दुख की वे रातें समाप्त होती हैं। पिता और पति दोनों से उपेक्षित जीजाबाई के चरणों में आज महाराष्ट्र के छत्रपति सिर झुका रहे हैं। जिस कामना की साधना में सारा जीवन व्यतीत किया, आज वह सफल हुई। शाहजी की उपेक्षिता धर्मपत्नी अस्सी साल की आयु में, आज पति व पिता की उदासीनता को भूलकर, वीरपुत्र की भक्ति और श्रद्धामयी सेवा से पुलकित हो अपने-आपमें समा नहीं रही। आनन्दाश्रु उसकी चिन्ता विपत्तियों से जर्जर शरीर को पुलकित और स्फूर्तिमय बना रहे हैं। आज उसके आनन्द का पारावार नहीं। अपने पुत्र को अपनी जन्मभूमि में मुकुट

माता की सेवा में निवेदन किया कि कुछ एक विचित्र वैरागी किले के दरवाजे पर खडे हैं। आपके दर्शनों के लिए अन्दर आना चाहते हैं। जीजाबाई ने अन्दर आने की आज्ञा दे दी। राजमाता के सामने उपस्थित होते ही नीरोजी पन्त ने वैरागियों के प्रथानुसार जीजाबाई को आशीर्वाद दिया। शिवाजी (वैरागी वेश में) जीजाबाई की ओर बढ़े और अपने-आपको उनके चरणों में समर्पित किया। जीजाबाई उन्हें पहचान न सकी और वैरागी के इस व्यवहार से हैरान हो गई कि एक वैरागी इस प्रकार मर्यादा के विपरीत आशीर्वाद देने के स्थान पर, अपने-आपको भक्तों के चरणों में समर्पित कर रहा है। माता को चकित-स्तम्भित देखकर शिवाजी ने अपना सिर जीजाबाई की गोदी में रख दिया और वैरागियोंवाली टोपी अपने सिर से उतार दी। शिवाजी के सिर के चिह्न को देखकर जीजाबाई ने उसे तत्काल पहचान लिया और उसका आलिंगन किया। जीजाबाई पुत्र की चतुराई तथा कुशलता को देखकर आनन्द से पुलकित हो गई। राजमाता ने शिवाजी के सकुशल लौटने पर अपने-आपको धन्य-धन्य समझा।

कर्नाटक में बाजाजी निम्बालकर नाम का मराठा सरदार रहता था। बीजापुर के बादशाह ने उसे कहा कि या तो तुम मुसलमान बनो नहीं तो तुम्हारी जागीर और सम्पत्ति छीन ली जाएगी। पारिवारिक परिस्थितियों से लाचार होकर निम्बालकर ने इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया। कुछ समय बाद यह सरदार शिवाजी के दरबार में पहुंचा। जीजाबाई को इस अनुभवी सरदार के पहुंचने का समाचार मिला। उन्होंने इस बलशाली सरदार को मराठा-मण्डल में सम्मिलित करने का विचार प्रकट किया। बिछुड़ी आर्यसन्तान को अपनाने का संकल्प किया। सरदारों से परामर्श किया।

राजमाता के संकल्प तथा इच्छा के सामने सबने सिर झुकाया। शुद्धि की गई। उसे फिर से आर्यजाति का अंग बनाया गया। जीजा-

बाई को इससे सन्तोष न हुआ। विवाह-सम्बन्ध के बिना इस प्रकार के संस्कार क्षणिक प्रभाव पैदा करते हैं। जीजाबाई ने अपनी पोती, शिवाजी की पुत्री व शम्भाजी की बहिन सुखुबाई का विवाह बाजाजी निम्बालकर के पुत्र महाराजी के साथ सन् १६५७ में कर दिया। आज आर्यजाति की देवियां अपनी संकीर्णता तथा रूढ़िप्रियता के कारण आर्यजाति में सम्मिलित होनेवाले लाखों आर्यसन्तानों को कुलाभिमान तथा जन्माभिमान के कारण तिरस्कृत कर रही है। जीजाबाई ने इस कार्य द्वारा महाराष्ट्र की जनता के सामने यथार्थ में अपने-आपको राजमाता के रूप में उपस्थित किया। शिवाजी के बालसखा, छोटे-बड़े जन्ममूलक ऊंच-नीच आदि के भेदभाव को छोड़कर, जीजाबाई को राजमाता एवं राष्ट्रमाता के रूप में पूजने लगे।

शिवाजी के राज्याभिषेक की तैयारियां हो रही हैं। विविध देशों के राजदूत शिवाजी से भेंट करना चाहते हैं। परन्तु शिवाजी राज्याभिषेक-समारोह में सम्मिलित होने से पूर्व स्वामी गुरु रामदास और जीजाबाई की सेवा में उपस्थित होकर आशीर्वाद प्राप्त कर रहे हैं। आज का दृश्य स्वर्णिम है। जागीरदार की कन्या जीजाबाई को सारा जीवन, युवावस्था की उमंग-भरी रातें, मुसीबतों में बितानी पड़ी थीं परन्तु आज उसकी दुख की वे रातें समाप्त होती हैं। पिता और पति दोनों से उपेक्षित जीजाबाई के चरणों में आज महाराष्ट्र के छत्रपति सिर झुका रहे हैं। जिस कामना की साधना में सारा जीवन व्यतीत किया, आज वह सफल हुई। शाहजी की उपेक्षिता धर्मपत्नी अस्सी साल की आयु में, आज पति व पिता की उदासीनता को भूल-कर, वीरपुत्र की भक्ति और श्रद्धामयी सेवा से पुलकित हो अपने-आपमें समा नहीं रही। आनन्दाश्रु उसकी चिन्ता विपत्तियों से जर्जर शरीर को पुलकित और स्फूर्तिमय बना रहे हैं। आज उसके आनन्द का पारावार नहीं। अपने पुत्र को अपनी जन्मभूमि में मुकुट

धारण करते हुए देखकर वह ग्रानन्द की ग्रनन्त लहरियों में तरंगित हो रही है। दयालु परमात्मा ने शायद उसे यह स्वर्णिम दृश्य देखने के लिए दीर्घायु प्रदान की है। राज्याभिषेक के बारह दिन बाद १८ जून को जीजाबाई ने देह-लीला संवरण की। राजमाता कुन्ती की भांति जीजाबाई ने ग्रपने पुत्र को विजयी ग्रौर राज्याभिषिक्त हुग्रा देखकर 'धर्मे वो धीयतां बुद्धिर्मनो वो महदस्तु च" का उपदेश देते हुए संसार से विदाई ली। जागीरदार की पुत्री, जागीरदार की पत्नी, विद्रोही तरुण की माता ग्राज राष्ट्रमाता की आन शान ग्रौर शोभा के साथ संसार से कूच कर गई। बोलो, राजमाता जीजाबाई की जय !!!

१. बुद्धि धर्म का चिन्तन करे ग्रौर तुम्हारा मन विशाल तथा उदार हो।

शिवाजी का बाल्यकाल और शिक्षण

गजेन्द्राश्च नरेन्द्राश्च प्रायः सीदन्ति दुःखिताः[1]।

मार्च, १६३६ तक शाहजी का परिवार शिवनेरी किले में रहा। १६३६ ई०, अक्तूबर में शाहजी ने बीजापुर-दरबार में नौकरी की। दरबार ने उन्हें चाकण से ले कर इन्द्रपुर और शिरबाल तक का प्रदेश जागीर के रूप में दिया। शाहजी ने दादाजी कोंडदेव को जागीर का प्रबन्धक नियत किया और उनसे कहा कि 'मेरी धर्म-पत्नी जीजाबाई शिवनेरी के किले में रहती है। उसने शिवाजी नाम के पुत्र को जन्म दिया है। उसे और उसके पुत्र शिवाजी को ले आओ और अपने निरीक्षण में उन्हें पूना में रखो। उन्हें आवश्यक खर्चों के लिए धन देते रहो।' माता तथा पुत्र शाहजी से पृथक् रहने लगे। शिवाजी अकेला, पिता के वात्सल्य-प्रेम से वंचित हो, पलने लगा। जीजाबाई उसके लिए सब कुछ थी। वह उसे साक्षात् देवी की तरह पूजता था। शिवाजी चिरकाल तक अपने पिता के लिए अजनबी बना रहा। शिवाजी ने अपने जीवन की रूपरेखा का निर्माण स्वयं किया। स्वतन्त्र-स्वच्छन्द-निर्बाध जीवन व्यतीत करने के कारण उसके स्वभाव में दूसरों के आगे हाथ पसारने की प्रकृति पैदा नहीं हुई। होनहार वीर पुरुषों की भांति उनमें स्वयं अपने लिए जीवन की दुर्गम घाटियों में अपना रास्ता बनाने की प्रवृत्ति पैदा हुई। इस प्रवृत्ति ने ही उन्हें विपरीत परिस्थितियों में, निर्भय और निशंक होकर आगे बढ़ने की

---

१. शेर और स्वाभिमानी राजा, स्वाभिमान-रक्षा के लिए प्रायः कष्टों और मुसीबतों का जीवन व्यतीत करते हैं।

ग्रौर प्रेरित किया। महाराणा रणजीतसिंह ग्रौर ग्रकबर की भां
बाल्यकाल से ही शिवाजी को स्वतन्त्र बुद्धि से काम लेना पड़ा।

जब दादाजी कोंडदेव ने पूना की जागीर का प्रबन्ध संभाला उ
समय यह जिला उजाड़ हो चुका था। लगातार छः साल के युद्ध
भूमि को बर्बाद कर दिया था। उच्छृंखल ग्राक्रमणकारी सिपाहिय
की लूटमार के बाद चोर-डाकुग्रों ने ग्रराजकता से खूब लाभ उठाया
पूना का प्रदेश निज़ामशाही के ग्रधिकार से निकलकर बीजापुर क
ग्रादिलशाही के ग्रधीन हुग्रा था। इस शासन-परिवर्तन-काल में को
स्थिर शासन-तंत्र स्थापित न हो सका था। शाहजी को इस भाग
दौड़ में इस प्रदेश का प्रबन्ध करने की फुर्सत न थी। १६३१-३२ ई०
में इस प्रदेश में भयंकर दुर्भिक्ष पड़ा। इस दुर्भिक्ष ने शाहजी ग्रौर
बीजापुर-दरबार की सेनाग्रों से तहस-नहस इस प्रदेश को ग्रौर भी
उजाड़ कर दिया। १६३४-३६ तक मुगलों के ग्राक्रमणों ने जुन्नार
ग्रौर पूना के उत्तरी मार्ग को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। इन्हीं दिनों
ग्रहमदनगर की निज़ामशाही के छिन्न-भिन्न होते-होते मोरो तानदेव
नाम के विद्रोही किसान ने पूना के समीपवर्ती प्रदेश में उपद्रव खड़ा
कर उसे ग्रपने ग्रधीन कर लिया। इस उजड़े प्रदेश में जंगली पशुग्रों
की प्रबलता हो गई।

दादाजी कोंडदेव ने ग्रपने स्वामी शाहजी के पुत्र शिवाजी के
साथ मिलकर इस उजड़ी जागीर तथा प्रदेश को ग्राबाद तथा सुरक्षित
करने का प्रयत्न किया। दादाजी कोंडदेव ने हिंसक पशुग्रों को मारने-
वाले पहाड़ियों को इनाम देने की घोषणा की। पहाड़ी लोगों को कई
प्रकार के प्रलोभन तथा रियायतें देकर इस प्रदेश में खेतीबाड़ी करने
के लिए उत्साहित किया। नये किसानों से भूमि-कर में प्रथम वर्ष में
एक रुपया, द्वितीय वर्ष में तीन, तीसरे वर्ष छः, चौथे वर्ष नौ, पांचवें वर्ष
... छठे वर्ष बीस रुपया लगान लेने की घोषणा की। पुराने
... को भी इसी प्रकार की ग्रनेक सुविधाएं दीं। दादाजी कोंडदेव

की इस नीति से यह प्रदेश कृषिभूमि बन गया।

इस प्रदेश की रक्षा के लिए स्थानीय सिपाहियों की टुकड़ी संगठित की। इन सिपाहियों को प्रदेश की रक्षा के लिए उचित स्थानों पर तैनात किया। दादाजी कोंडदेव के सुप्रबन्ध से उस देश से चोरों और लुटेरों का नाम मिट गया। शाहजी के नाम से एक बगीचा बनाया। किसी भी व्यक्ति को वहां से फलादि तोड़ने की आज्ञा न थी। एक दिन अचानक दादाजी कोंडदेव ने स्वयं उस बाग में एक आम के वृक्ष से फल तोड़ लिया। इस अपराध पर वे स्वयं अपना हाथ काटने लगे, परन्तु दूसरे व्यक्तियों के बीच में पड़ने से वे रुक गए। नियंत्रण के प्रति सम्मान का भाव दिखाने के लिए उन्होंने जीवन के शेष भाग में अपने गले में लोहे की जंजीर डाली और अपराधी हाथ को मृत्युपर्यन्त लम्बे दस्ताने में बन्द रखा। दादाजी कोंडदेव की संगत से शिवाजी ने प्रबन्ध, शासन और नियंत्रण करने की शिक्षा प्राप्त की। साथ ही साथ घोड़े पर चढ़ना, शस्त्रास्त्र चलाना तथा योद्धाओं के लिए आवश्यक करतब शिवाजी ने इस प्रदेश में पूरी स्वाधीनता के साथ सीखे। दिन-रात पहाड़ी मावलियों के साथ इन घाटियों में विचरने से शिवाजी का स्वभाव और शरीर स्फूर्तिमय तथा अनथक परिश्रम करने का अभ्यासी हो गया।

शिवाजी के अक्षर-ज्ञान की शिक्षा के विषय में कोई स्पष्ट प्रबल प्रमाण नहीं मिलता। तारीख-ए-शिवाजी और चिटनवीस के वर्णनों से यह पता लगता है कि दादाजी कोंडदेव ने शिवाजी को शिक्षित करने के लिए शिक्षक नियत किया और वह बहुत विद्वान हो गए। परन्तु उपलभ्यमान ऐतिहासिक विवरणों में ऐसा कोई प्रबल प्रमाण नहीं मिलता, जिससे शिवाजी के पुस्तक-ज्ञान अथवा अक्षर-ज्ञान को सिद्ध किया जा सके।

परन्तु इस शिक्षण के न होने से उनका हृदय तथा मन भावहीन और जड़ नहीं रहे। शिवाजी के हृदय तथा मन को रामायण,

महाभारत की कथाओं ने प्रभावित किया था। उन्हें साधु-संत फकीरों के सत्संग का बहुत शौक था। रामदास, तुकाराम और मुसलमान फकीरों की सेवा और सत्संगति से उन्होंने अपने हृदय में आध्यात्मिकता और पवित्र भावों को विशेष रूप से संचित किया था। जब कभी विजय-यात्रा से अवसर बनता तो वे मार्ग में आनेवाले मन्दिरों के दर्शन से न चूकते थे। माता जीजाबाई की धार्मिक और वैराग्य-प्रधान सात्विक प्रवृत्तियों ने शिवाजी के हृदय को आदर्शवाद का पुजारी बना दिया था। बाल्यकाल की इस शिक्षा ने उन्हें युवावस्था तथा बड़ी उमर में अपने स्वीकृत पथ से विचलित न होने दिया।

सेनापति नेल्सन और सम्राट नैपोलियन के विषय में प्रसिद्ध है कि उन्होंने जीवनकाल की प्रसिद्ध लड़ाइयां अपने शिक्षणालयों के क्रिकेट के मैदानों में जीती थीं। इसी प्रकार से शिवाजी के विषय में यह कहना यथार्थ है कि उन्होंने बीजापुर और मुगल बादशाहों के साथ जो भयंकर युद्ध किए, उनकी तैयारी उन्होंने अपने शिक्षाकाल में, शैशव क्रीड़ा-स्थान मावला के प्रदेश में की थी। पूना प्रदेश का पश्चिमी भाग—पश्चिमी घाट के साथ दस मील की लम्बाई और चौदह मील की चौड़ाईवाला स्थान—मावला प्रदेश कहलाता था। यह प्रदेश अत्यन्त औघड़, पथरीला, चक्करदार, गहरी घाटियों में घिरा हुआ, छोटे-छोटे समतल भूमिभागोंवाला है। इन घाटियों से कई तरह की ऊंची-सीधी पहाड़ियां दिखाई देती हैं। जहां वृक्ष हैं, वहां साथ ही घनी झाड़ियोंवाले दुर्गम जंगल भी हैं। कहीं-कहीं घने-घने जंगलों के टुकड़े दिखाई देते हैं। इस प्रदेश की उत्तरी घाटियों में रहनेवाले पहाड़ी कोली कहलाते हैं। दक्षिणी घाट के निवासी मराठा कहलाते हैं। इस प्रदेश की आबोहवा खुश्क और जीवन-संचारिणी है। पश्चिम और दक्षिणी भारत के अन्य प्रदेशों की अपेक्षा यहां का वातावरण कम गर्म है। यह सारा प्रदेश सामूहिक रूप में उन्नीस

मावलों के नाम से कहलाता है। जुन्नार के नीचे बारह मावल थे और पूना के नीचे भी बारह मावल थे। दादाजी कोंडदेव ने इन मावलों को पूर्णतया अपने अधीन कर लिया। जिन्होंने सिर उठाया, उन्हें कुचल दिया गया। शिवाजी भी इन प्रदेशों में विचरते रहे। दिन-रात के इस क्रीड़ास्थल से उन्हें भविष्य में जीवन-साथी, उत्तम सिपाही, बालसखा और सब कुछ न्योछावर करनेवाले अनुयायी मिले। येशाजी कंक तथा बाजी पासलकर शिवाजी के समवयस्क मावले सरदार थे। कोंकण का तानाजी मालसुरे भी इसी प्रकार का शिवाजी का विश्वस्त बालसखा वीर था।

इन साथियों के साथ शिवाजी स्वतन्त्र जीवन व्यतीत करने लगे। यथावसर क्षात्रधर्म में शिक्षित होने के लिए किलों पर भयानक आक्रमण करते। मुगल-दरबार और दक्खिन के विदीर्ण होते हुए दरबारों में उन्हें अपनी शक्तियों के विकास का अवसर दिखाई देता था। वे स्वतन्त्र जीवन व्यतीत करने के लिए उत्कण्ठित थे। दादाजी कोंडदेव, उनकी इन उच्छृंखलताओं से चिन्तित थे। कई बार शाहजी तक इसकी सूचना भी पहुचाई। शाहजी ने चेतावनी के पत्र भी लिखे। दादाजी कोंडदेव ईमानदार तथा प्रभावशाली प्रबन्धक थे। बीजापुर-दरबार और शाहजी की सेवा करना वह अपना मुख्य कर्तव्य समझते थे। जीवनकाल का बड़ा भाग इसी भावना में बिताया था। वे शिवाजी की मनोवृत्ति को, उनकी उमगों को समझ न सकते थे। उन्होंने कई बार शिवाजी को बीजापुर का भक्त बनकर सांसारिक ऐश्वर्य का उपभोग करने, और ऊंचे ओहदे प्राप्त करने के लिए प्रेरित किया। परन्तु माता की स्वतंत्र लोरियां, पहाड़ी प्रदेशों की उत्तुङ्ग चोटियों की स्वाभाविक स्वतन्त्र पवन में विकसित उमङ्गें, दरबार के सुनहरे ऐश्वर्यों से तृप्त न हो सकती थीं। वे स्वतन्त्र सिंह की भांति दुर्गम पहाड़ियों में अपना स्वतन्त्र रास्ता बनाना चाहते थे। इन्हीं दिनों १६४७ ई० में दादाजी कोडदेव का देहान्त हो गया।

कइयों का कहना है कि शिवाजी की उच्छृंखलताओं तथा बीजापुर-दरबार की भर्त्सनाओं से तंग आकर दादाजी ने विष खा लिया। इस समय शिवाजी की आयु बीस वर्ष की थी। दादाजी की मृत्यु के बाद शिवाजी स्वतन्त्र हो गए। अपनी जागीर का प्रबन्ध तथा शासन की बागडोर स्वयं संभाली। एक जागीरदार के बेटे, दरबारी पिता के पुत्र ने अशिक्षित पहाड़ी किसानों को बालसखा बनाकर, भवानी की तलवार के चमत्कारी आक्रमणों और सतर्क जटिल संधि-युद्धों के गहरे दांव-पेचों से, साधनसम्पन्न शासन-तंत्रों को शिथिल और जीर्णशीर्ण कर दिया। इसका रोमांचकारी वर्णन ही शिवाजी की जीवनी का विद्युत्-संचारी कथानक है। वर्तमान भारत को स्वतन्त्र भारत बनाने के लिए उत्कण्ठित तरुणहृदय किसानों, आदर्शवादी जमींदारों, राष्ट्रभक्त मजदूरों, स्वाभिमानी धनमानी भारतीयों को स्वतन्त्र एवं स्वाभिमानपूर्वक जीवन व्यतीत करने के लिए, शिवाजी की भांति दरबारों द्वारा सम्मानित होने के स्थान पर, भूखी-असंतुष्ट जनता द्वारा सम्मानित होने का संकल्प धारण करना चाहिए। तभी भारतमाता अपने पुत्रों को स्वतन्त्रता, समानता, भ्रातृभावना की पवित्र, निर्मल, शीतल, जलधाराओं से अभिषिक्त देख सकेगी। यथार्थ में इस स्वतन्त्र युद्ध की तैयारी के लिए—भारत की पर्वतमालाओं की घाटियां, घने बीहड़ जंगलों की पगडंडियां, शहरों की गलियां, गांव की झोंपड़ियां और समतल मैदानों की निर्जन मरुस्थलियां ही पूर्वपीठिका-भूमि और शिक्षण-स्थल हैं। इनकी पैदल परिक्रमा करनेवाले ही स्वातंत्र्य-युद्ध में दीक्षित हो सकते हैं।

स्वातन्त्र्य-युद्ध का शंखनाद

सेनापति की नियुक्ति

शिवाजी अपने पिता की पश्चिमी जागीर पर काम करनेवाले हरएक कार्यकर्ता को जानते थे। दादाजी कोंडदेव के जीवनकाल में ही शिवाजी जागीर पर काम करनेवाले नौकरों को अपने नाम से सीधी आज्ञाएं देने लगे थे। उनके मुख्य कार्यकर्ता निम्नलिखित थे : १—श्यामराज नीलकण्ठ रांचेकर पेशवा (Chancellor) २—बालकृष्ण दीक्षित मजूमयेदार हिसाब लिखनेवाले (Accountant General) ३—सोनाजी पन्त दबीर मन्त्री (Secretary) ४—रघुनाथ बल्लाल कोर्डे सबनीस कोषाध्यक्ष (Pay master)। शाहजी ने जागीर का प्रबन्ध करने के लिए ये चार व्यक्ति १६३६ ई० में कर्नाटक से इधर भेजे थे। दादाजी कोंडदेव इनसे जागीर का काम लेते रहे। शिवाजी ने प्रबन्ध का काम हाथ में लेते ही तुकोजी घोर मराठे को अपना 'सर-एक नौबत' सेनापति (Commander-in-chief) और नारायण पन्त को खजान्ची (Divisional Pay master) नियत किया। सेनापति की नियुक्ति द्वारा, शिवाजी ने स्वातन्त्र्य-युद्ध का शंखनाद किया। रणचण्डी भवानी की पूजा के लिए, स्वतंत्रता के दीवाने शस्त्रधारी सिपाहियों की टोली को सजाया। इन्हीं दिनों १६४६ ई० में शिवाजी को समाचार मिला कि बीजापुर का बादशाह मुहम्मद आदिलशाह बीमार हो गया है। वह दस साल तक बीमार रहा। इस बीमारी के कारण बादशाह दरबार तथा राज के काम-काज स्वयं न देख सकता था। प्रबन्ध का काम बेगम बड़ी

शाहिबा करती थीं। राज्य के दूरस्थ प्रदेशों में, कर्नाटक आदि प्रान्तों में, सरदार लोग स्वेच्छापूर्वक यथावसर प्रदेशों को बीजापुर में शामिल कर रहे थे।

शिवाजी ने बीजापुर दरबार की दुर्बलता से लाभ उठाने का संकल्प किया। १६४६ ई० में तोरण का किला जीतने के लिए बाजीपासलकर, येसाजी कंक और तानाजी मालसुरे को मावलों की पैदल टुकड़ी के साथ भेजा। बीजापुर का सरदार इनके सामने टिक न सका। तोरण का किला शिवाजी के अधीन हो गया। यहां के सरकारी खजाने से लगभग दो लाख की सम्पत्ति मिली। इस किले से पांच मील पूर्व की ओर पहाड़ियों की इस तलहटी पर राजगढ़ नाम का नया किला बनाया। यह किला पहाड़ी भाग को क्रमशः एक-दूसरे से ऊंची, तीन उच्च भागों पर खड़ी की गई, एक-दूसरे के पीछे तीन दीवारों से घेरकर सुरक्षित किया गया। बीजापुर-दरबार में भी ये समाचार पहुंचे। शिवाजी ने चतुराई से दरबारी आदमियों को अपने साथ मिला लिया। शाहजी ने भी तोरण किले के किलेदार *की अयोग्यता और शिवाजी की बीजापुर-दरबार की भक्ति की* चर्चा कर दरबार के क्रोध को शान्त किया। दादाजी कोंडदेव की मृत्यु के *बाद शिवाजी ने यत्न किया कि पूना-सूपा की जागीर को* अपने अधीन कर उसे एक संगठित प्रदेश के रूप में एक शासनतंत्र के नीचे रखा जाए। इस उद्देश्य की पूर्ति में शाहजी की दूसरी धर्मपत्नी का भाई शम्भाजी मोहिते बाधक था। वह शाहजी की ओर से सूपा की जागीर में रहता था। दादाजी के जीवनकाल में कोई अड़चन पैदा न हुई। परन्तु दादाजी कोंडदेव की मृत्यु के बाद शम्भाजी मोहिते ने शिवाजी की आज्ञा मानने से इन्कार किया और शाहजी से सीधी आज्ञा लेकर काम करना चाहा। शिवाजी इस आज्ञाभङ्ग को नहीं सह सकता था। शिवाजी ने मौका देखा। आमोद-प्रमोद के निमित्त उसको मिलने गया। आज्ञा मानने से इन्कार करने पर उसको गिर-

पतार कर लिया। उसकी सम्पत्ति छीनकर अपने अधीन कर ली और उसे शाहजी के पास भेज दिया। सूपा के प्रदेश को भी अपनी जागीर में मिला लिया। चाकण किले के किलेदार फिरंगाजी नरसाला, जागीर के पूर्वी भागों के, थाना और बारामती के, सरदारों ने भी शिवाजी की अधीनता स्वीकार की। पूना से ग्यारह मील दक्षिण-पश्चिम की ओर कोंडाने का किला, आदिलशाह के सूबेदार को अपने साथ मिलाकर, अपने अधीन कर लिया।

पूना से अठारह मील दक्षिण-पूर्व की ओर पुरन्दर का अभेद्य दुर्ग था। बीजापुर-दरबार की ओर से इस किले पर नीलोनिकण्ठ नायक नाम का ब्राह्मण तैनात था। इस परिवार के लोग चिरकाल से इस किले के आसपास के प्रदेशों में प्रबन्ध करते थे। नीलोनिकण्ठ कठोर प्रकृति का पुरुष था। अपने छोटे भाई पिलाजी और शकराजी को इस जागीर का किसी प्रकार का हिस्सा न देता था। इन दोनों ने शिवाजी को मध्यस्थ होकर फैसला करने के लिए निमन्त्रित किया। दिवाली के दिन अतिथि के रूप में शिवाजी को किले में निमन्त्रित किया। तीसरे दिन दोनों भाइयों ने अचानक अपने बड़े भाई को बेड़ियों में बांधकर शिवाजी के सामने उपस्थित किया। परन्तु शिवाजी ने तीनों भाइयों को गिरफ्तार कर लिया और किले को अपने अधीन कर नीलोजी के सब नौकरों तथा पहरेदारों को निकाल दिया। उनके स्थान पर अपने मावले सरदारों को किले का रक्षक नियत किया। इसी सिलसिले में रोहिरा, तिगोना (पूना के उत्तर-पश्चिम), लोहगढ़ आदि किलों को भी अपने अधीन कर लिया।

इसके बाद शिवाजी ने उत्तर कोंकण में प्रवेश किया। कल्याण जिले में बीजापुर-दरबार की ओर से अरब-निवासी मुल्ला अहमद नाम का विदेशी सूबेदार शासन करता था। बीजापुर के बादशाह की बीमारी के कारण इस सरदार को बीजापुर में रहना पड़ा।

उसके पीछे इस प्रदेश का शासन-प्रबन्ध शिथिल हो गया था। जनता में असन्तोष फैलने लगा। इसी समय आबाजी सोनदेव के अधीन मराठे घुड़सवारों ने इस प्रदेश पर हमला किया। कल्याण और भींडी नाम के समृद्ध नगरों से पर्याप्त सम्पत्ति प्राप्त की। माहुली का किला भी जीत लिया। कल्याण का शहर और थाना के कुछ भाग शिवाजी के अधीन हो गए। शिवाजी के वीर सिपाही दक्षिण की ओर बढ़ते-बढ़ते कोलाबा जिले में पहुंचे। यहां के स्थानीय सरदारों ने मुसलमानी शासकों से स्वतन्त्र होने के लिए शिवाजी को निमन्त्रित किया। सूर्यगढ़, बीरवाड़ी, ताला, घोसलगढ़, सूरन, मंगोही किलों के साथ कैरी (रायगढ़) के अभेद्य किले को भी अपने अधीन किया। यह रायगढ़ ही शिवाजी की राजधानी बना। इस प्रकार जंजीरा के अबिसीनियों का कोलाबा जिले का पूर्वी भाग भी शिवाजी के अधीन हो गया। आवश्यकतानुसार इन स्थानों पर बीरवाड़ी और तिगोना में (रायगढ़ से पांच मील पूर्व की ओर) दुर्गम पहाड़ी किले बनाए गए। शिवाजी ने उत्तर कोंकण के इन विजित प्रदेशों का प्रबन्ध करने के लिए आबाजी सोनदेव को यहां का शासक नियत किया।

शिवाजी के इन कार्यों से बीजापुर-दरबार में खलबली मच गई। शिवाजी की प्रगति को रोकने के उपाय सोचे जाने लगे। शाहजी बीजापुर-दरबार की ओर से कर्नाटक में शासन-प्रबन्ध करते थे। दरबार ने उनपर दबाव डालकर शिवाजी की रोकथाम करनी चाही। बीजापुर-दरबार की फौजें शाहजी के निरीक्षण में जिंजी किले को जीतने में जुटी हुई थीं। परन्तु उन्हें सफलता नहीं मिल रही थी। शाहजी ने अपना आदमी भेजकर बीजापुर के नवाब मुस्तफाखां से छुट्टी मांगी और कहा कि अनाज महंगा हो गया है, सिपाही थक गए हैं, अतः वे देर तक इस युद्ध को जारी नहीं रख सकते। नवाब मुस्तफाखां ने बाजीराव घोरपड़े और जसवन्तराव आसद-

खानों को सेना के साथ शाहजी को गिरफ्तार करने के लिए भेजा। शाहजी रात के आमोद-प्रमोद के कारण प्रातःकाल अभी सो रहे थे कि बाजीराव घोरपड़े ने उनके शिविर पर आक्रमण कर दिया। शाहजी अपने बचाव के लिए घोड़े पर सवार होकर अकेले निकल भागे। बाजीराव घोरपडे ने उनका पीछा किया, और उन्हें गिरफ्तार कर नवाब के सामने पेश किया। बीजापुर के बादशाह आदिलशाह ने अफजलखां को शाहजी की सम्पत्ति ज़ब्त करने और उन्हें बीजापुर-दरबार में हाजिर करने के लिए भेजा। शाहजी बेड़ियों और जंजीरों में जकड़े हुए बीजापुर-दरबार में लाए गए। वहां उन्हें कैद किया गया। उनकी कोठरी के दरवाज़ों में ही ईंटें चुनी जाने लगीं। इस प्रकार उन्हें भांति-भांति से, अपने पुत्र शिवाजी को राजद्रोही कारनामों से रोकने के लिए, तंग किया जाने लगा।

राजद्रोही पुत्र के विद्रोह के कारण राजभक्त पिता को कैदी बनना पड़ा। अदूरदर्शी, अत्याचारी शासकों ने पुत्र के पापों के लिए पिता को, उसकी राजसेवाओं की उपेक्षा करके, कालकोठरी में डालकर भयंकर से भयंकर अत्याचारों की भूमिका बांधी। अत्याचारी-स्वेच्छाचारी सरकारें इस प्रकार के व्यवहार करने में संकोच नहीं करतीं। स्वेच्छाचारी शासकों का स्वभाव ही ऐसा हो जाता है। शिवाजी के सामने विषम समस्या उपस्थित थी। शिवाजी इससे विचलित नहीं हुए। उन्होंने मुगल बादशाह के पुत्र मुरादबख्श के पास अपना प्रतिनिधि भेजकर उसे बीजापुर-दरबार के विरुद्ध आक्रमण करने के लिए उत्साहित किया और उसे आदिलशाही को मुगल-दरबार के अधीन करने की आशा दिलाई। जिस समय शाहजी कैद में थे—उस समय बीजापुर-दरबार ने बाजीश्यामराज को दस हज़ार सिपाहियों के साथ शिवाजी को गिरफ्तार करने के लिए कोंकण में भेजा। शिवाजी चौल के प्रदेश में लूटमार कर रहे थे। श्यामजी उन्हें गिरफ्तार न कर सका। इसके विपरीत शिवाजी ने अपनी

फ़ड़ी भेजकर बाजीश्याम की सेना पर छापे मारकर उसे वापस
जा। बीजापुर-दरबार के अधिकारियों को इसकी भनक मिली।
जापुर-दरबार के शरजाखां और रणदुल्लाखां ने बीच में पड़कर
ाहजी को कैद से छुड़ा दिया। शिवाजी ने भी शाहजी के जीवनकाल
क बीजापुर-दरबार के प्रदेशों पर आक्रमण न करने का आश्वासन
िया। जिंजी का किला जीतने के बाद शाहजी को रिहा कर दिया
ा। कैद से छूटकर शाहजी तुंगभद्रा प्रदेश में रहे और वहीं से
पनी जागीर का प्रबन्ध करते रहे।

१६४९ से १६५५ ई० तक शिवाजी ने बीजापुर-दरबार के किसी
देश पर आक्रमण नहीं किया। यह समय विजित प्रदेशों को सुदृढ़
र सुरक्षित करने में व्यतीत किया। शिवाजी अनुभव करते थे कि
ब तक जावली का प्रदेश नहीं जीता जाएगा और इसे मराठा-मंडल
शामिल नहीं किया जाएगा, तब तक ये विजित प्रदेश सुरक्षित
हीं हैं। इसलिए शिवाजी जावली पर आक्रमण कर, उसे जीतने की
ारियों में लग गए।

न्द्रराव मोरे का खून

सतारा जिले के उत्तर-पश्चिमी कोने में जावली नाम का ग्राम
। यह प्रदेश पहाड़ों और जंगलों से छाया हुआ है। जावली से कोंकण
ा और छोटे-छोटे असंख्य नाले बहते हैं। १६वीं सदी में मोरे नाम
मराठा वंश को बीजापुर-दरबार से जावली का प्रदेश वीरता के
स्कार में जागीर के तौर पर मिला था। इनके पास बारह हज़ार
ल सेना थी। ये सिपाही मावलों की टक्कर के थे। बीजापुर-
बार ने इस वंश के वीर पुरुषों की वीरता से प्रसन्न होकर इन्हें
न्द्रराव' की पदवी दी थी। १६५२ ई० में कृष्णाजी बाजी जावली
शासक था। यह प्रदेश सैनिक दृष्टि से शिवाजी के लिए महत्त्व-
ां था। यहां के मराठे तथा इस प्रदेश की भौगोलिक स्थिति शिवाजी

के राज्य-विस्तार की योजना में अत्यन्त सहायक थी। शिवाजी ने रघुनाथ बल्लाल कोर्डे को एक सौ पचीस चुने हुए वीरों के साथ जावली भेजा। उसने कृष्णाजी के सामने प्रस्ताव किया कि वह अपनी लड़की का विवाह शिवाजी के साथ कर दे। इधर विवाह की बातचीत चल रही थी। इसी बीच में रघुनाथ बल्लाल ने वहां की स्थिति तथा जावली सरदार के स्वभाव तथा रहन-सहन का पूरा-पूरा पता लिया। उसे मालूम हुआ कि वह शराबी है और असावधान स्वभाव का है। शिवाजी के पास सूचना भेजी और उन्हें परिस्थितियों से लाभ उठाने के लिए सेना के साथ समीपवर्ती प्रदेश में उपस्थित रहने की सलाह दी। बल्लाल ने चन्द्रराव मोरे से दूसरी भेंट एकान्त में की। प्रारम्भ में विवाह-सम्बन्धी बातें विस्तार के साथ होती रहीं। चन्द्रराव का ध्यान इन बातों में लगा था कि बल्लाल ने एकदम अचानक खंजर खींच ली और चन्द्रराव पर हमला कर उसे यमलोक भेज दिया। उसके भाई सूर्यराव को भी जख्मी किया। बल्लाल के साथी मराठे सिपाही ने सूर्यराव का भी प्राणान्त कर दिया। खूनी एकदम दरवाजे से बाहर निकल भागे और समीप के जंगलों में सुरक्षित स्थान पर छिप गए।

शिवाजी भी बल्लालपन्त के संकेत पर तीर्थ-यात्रा के निमित्त सेनासहित महाबलेश्वर पहुंचे हुए थे। चन्द्रराव की हत्या का समाचार मिलते ही वे जावली पहुंचे और जावली के किले के संरक्षकों पर आक्रमण कर दिया। छः घंटों तक घमासान युद्ध हुआ। दोनों ओर लड़नेवाले मराठे सिपाही थे। चन्द्रराव के दो पुत्रों और परिवार को कैद कर लिया गया। चन्द्रराव मोरे के सम्बन्धी, जागीर के प्रवन्धक हनुमन्तराव मोरे ने, समीप के गांव में सेना इकट्ठी कर शिवाजी का मुकाबला करना चाहा। शिवाजी ने हनुमन्तराव का खून करने के लिए शम्भुजी कावजी नाम के मराठे सरदार को सन्देश भेजने के बहाने से भेजा। दोनों की एकान्त में भेंट हुई। १६५४ में कावजी ने इसपर भी खंजर का वार कर इसे परलोक भेजा। इस प्रकार जावली

का सारा प्रदेश शिवाजी के अधीन हो गया। अब शिवाजी को दक्षिण कोंकण तथा कोल्हापुर प्रदेश पर आक्रमण करने से रोकनेवाला कोई नहीं रहा। कई ऐतिहासिकों का कहना है कि मोरे के दोनों पुत्रों को पूना ले जाकर मार दिया गया। मोरे वंश के शेष व्यक्ति इधर-उधर तितर-बितर हो गए। १६६५ ई० में महाराज जयसिंह ने शिवाजी को पराजित करने के लिए इन मोरों से भी सहायता ली। शिवाजी को इस प्रदेश को जीत लेने से अपनी सेना के लिए लड़ाके सिपाही और कई वर्षों से संचित मोरों का कोष भी मिला।

जावली से दो मील पश्चिम की ओर प्रतापगढ़ नाम का नया पहाड़ी दुर्ग बनवाया। इस किले में अपनी आराध्या देवी भवानी की प्रतिमा स्थापित की। तुलजापुर की भवानी-प्रतिमा दूर थी। शिवाजी ने समय-समय पर प्रतापगढ़ की भवानी को अनेक कीमती उपहारों से सुसज्जित किया।

जावली के पश्चिम की ओर कोंकण के मैदान में, रत्नगिरि जिले के मध्य में स्थित शृंगेरपुर पर शिवाजी ने आक्रमण किया। आस-पास के छोटे-मोटे सरदारों को भी अपने अधीन किया। इस प्रकार से रत्नगिरि का पूर्वी भाग भी शिवाजी के अधीन हो गया।

शिवाजी ने यह खून क्यों कराया? शिवाजी का इस हत्या से प्रत्यक्ष कितना सम्बन्ध था? मोरे जाति के वीर भी मराठे थे—शिवाजी ने साम नीति द्वारा, शान्ति द्वारा मोरे सरदारों को अपने साथ मिलाने का यत्न किया; मोरे घराने की कन्या के साथ विवाह करने का प्रस्ताव भी किया। इसपर भी जब जावली को अपने साथ मिलाने का कोई रास्ता न मिला तो दूत को भेजा। दोनों में कहा-सुनी हो गई। मोरों ने शिवाजी के सेनासहित महाबलेश्वर आने पर आपत्ति की। शिवाजी के दूत ने मोरों पर शिवाजी के साथ विश्वास-घात कर आक्रमण करने का अपराध लगाया। बातों-बातों में तलवारें [illegible]च गईं। मोरे के निवास-स्थान पर शिवाजी के वीर दूत की

तलवार का वार अचूक रहा। शिवाजी इस अवसर को न चूका। श्रीकृष्ण के पदचिह्नों पर चलते हुए ब्राह्मण-वेश धारण किए हुए भीम, अर्जुन द्वारा किए गए जरासंध-वध की भांति, अपने राज्य-विस्तार के कंटक को दूर किया। आसपास के छोटे-मोटे सरदारों को शराब पीनेवाले मोरे सरदारों के तथा बीजापुर-दरबार के अत्याचारों से मुक्त किया। यदि मोरे सरदार शान्तिपूर्वक शिवाजी का साथ देते तो शिवाजी के दूत को मराठे भाई के खून से अपनी तलवार रक्तरंजित न करनी पड़ती। शिवाजी के इस खूनी वार से आसपास के मराठे सरदारों तथा बीजापुर-दरबार पर भारी आतंक छा गया। प्रतिपक्षी लोग शिवाजी और उसके अनुयायियों की छाया को मौत की छाया समझकर भयभीत होने लगे।

राजनीति की शतरंजी चालें

१६५३ ई० के बाद औरंगजेब दक्षिण भारत का शासक बनकर आया। इसने इधर आते ही बीजापुर पर आक्रमण करने की तैयारियां शुरू की। शिवाजी ने इस मौके से लाभ उठाकर मुगलों के साथ मिलकर बीजापुर-दरबार से छीने हुए प्रदेशों को स्थिर रूप में अपने अधीन करने के लिए मुगल बादशाह से सन्धि-चर्चा शुरू की। अपने दूत औरंगजेब के पास भेजे। बीजापुर-दरबार को इसका पता चला। बीजापुर-दरबार ने शिवाजी और मुगल-दरबार को आपस में लड़ाने के लिए शिवाजी को मुगल-प्रदेशों पर हमला करने की प्रेरणा की। औरंगजेब इस समय अपनी सेनाओं के साथ बीदर में रुका हुआ था।

शिवाजी ने मीनाजी भोंसले और काशी नाम के मराठे सरदारों को तीन हजार सिपाहियों के साथ भीमा नदी पार कर, चमारगुण्डा और रायसीन के प्रदेशों के मुगलाई ग्रामों को लूटने के लिए भेजा। इन सरदारों ने अपने तूफानी हमलों से इस प्रदेश को खूब लूटा और

अहमदनगर शहर तक वार किया। दूसरी तरफ शिवाजी स्वयं जुन्नर के मुगलाई प्रदेश में लूटमार कर रहे थे। एक रात जुन्नर शहर की चारदीवारी पर शिवाजी चुपचाप रस्सी की सीढ़ियों से चढ़ गए। पहरेदार को मौत के घाट उतारकर वहां से तीन लाख हुन, दो सौ घोड़े, कीमती जवाहरात और कपड़े लूट ले गए। इन समाचारों ने औरंगज़ेब को हैरान कर दिया। उसने अपने सरदारों को, मराठा-विद्रोही सरदारों को मुगल-प्रदेशों से निकालकर, शिवाजी के प्रदेशों पर आक्रमण करने का हुक्म दिया। मुल्तफतखां और नासिरखां ने मराठे सरदारों की लूटमार की रोकथाम कर अहमदनगर और जुन्नर को मराठों से खाली किया। इन्हीं दिनों १६५७ ई० में शाहजहां की बीमारी के कारण शाहजहां के बेटों में राजगद्दी का उत्तराधिकारी बनने के लिए युद्ध शुरू हो गया। इधर बीजापुर-दरबार ने मुगलों से सन्धि कर ली। यह अवस्था देखकर शिवाजी ने मुगलों के साथ अकेले युद्ध करना व्यर्थ समझा और रघनाथ बल्लाल को औरंगज़ेब के पास सुलह के लिए भेजा। औरंगज़ेब राजगद्दी के युद्धों के लिए उत्तर भारत की यात्रा करने को तैयार हो चुका था, इसलिए उसने सोनाजी को शिवाजी के प्रतिनिधि के रूप में मुगल-दरबार में भेजने की स्वीकृति देकर पूना-सूपा-कोंकण की जागीरों पर शिवाजी का अधिकार स्वीकार किया।

परन्तु दूसरी ओर गुप्त रूप से औरंगज़ेब ने अपने सरदार मीर-जुमला और बीजापुर के बादशाह आदिलशाह को हुक्म दिया कि शिवाजी को सिर मत उठाने दो। उसे मुगलाई प्रदेशों से दूर कर्नाटक में जागीर देकर उसकी सेवा से फायदा उठाओ। पूना-कोंकण आदि प्रदेशों से निकालकर उसके किलों को जीत लो। मुगल-दरबार और बीजापुर-दरबार मिलकर शिवाजी का दमन करने की तैयारियां करने लगे। परन्तु। शिवाजी शत्रुओं की इन चालों को समझते थे। उन्होंने औरंगज़ेब के दक्षिण से उत्तर भारत को रवाना होते ही

बीजापुर-दरबार की अन्दरूनी दुर्बलताओं से लाभ उठाकर राज्य-विस्तार के लिए अपने वीर सिपाहियों को तैनात किया। इधर औरंगज़ेब को दक्षिण से उत्तर जाते देखकर, बीजापुर-दरबार के प्रधानमंत्री खवासखान और बेगम बड़ी साहिबा ने विद्रोही सरदारों का दमन करना शुरू किया। दरबार की नज़र शिवाजी की उच्छृंखलताओं पर पड़ी। शिवाजी का दमन करने के लिए सेना भेजने का निश्चय किया गया। परन्तु शिवाजी के चमत्कारों के जादू के कारण उस सेना का सेनापति बनने को कोई उद्यत नहीं होता था। बीजापुर-दरबार ने इस काम के लिए अपने दरबार के विश्वासपात्र, अनुभवी सरदार अफ़ज़लखाँ को नियत किया।

अहमदनगर शहर तक वार किया। दूसरी तरफ शिवाजी स्वयं जुन्नर के मुगलाई प्रदेश में लूटमार कर रहे थे। एक रात जुन्नर शहर की चारदीवारी पर शिवाजी चुपचाप रस्सी की सीढ़ियों से चढ़ गए। पहरेदार को मौत के घाट उतारकर वहां से तीन लाख हुन, दो सौ घोड़े, कीमती जवाहरात और कपड़े लूट ले गए। इन समाचारों ने औरंगजेब को हैरान कर दिया। उसने अपने सरदारों को, मराठा-विद्रोही सरदारों को मुगल-प्रदेशों से निकालकर, शिवाजी के प्रदेशों पर आक्रमण करने का हुक्म दिया। मुल्तफतखा और नासिरखां ने मराठे सरदारों की लूटमार की रोकथाम कर अहमदनगर और जुन्नर को मराठों से खाली किया। इन्हीं दिनों १६५७ ई० में शाहजहां की बीमारी के कारण शाहजहां के बेटों में राजगद्दी का उत्तराधिकारी बनने के लिए युद्ध शुरू हो गया। इधर बीजापुर-दरबार ने मुगलों से सन्धि कर ली। यह अवस्था देखकर शिवाजी ने मुगलों के साथ अकेले युद्ध करना व्यर्थ समझा और रघनाथ बल्लाल को औरंगजेब के पास सुलह के लिए भेजा। औरंगजेब राजगद्दी के युद्धों के लिए उत्तर भारत की यात्रा करने को तैयार हो चुका था, इसलिए उसने सोनाजी को शिवाजी के प्रतिनिधि के रूप में मुगल-दरबार में भेजने की स्वीकृति देकर पूना-सूपा-कोंकण की जागीरों पर शिवाजी का अधिकार स्वीकार किया।

परन्तु दूसरी ओर गुप्त रूप से औरंगजेब ने अपने सरदार मीर-जुमला और बीजापुर के बादशाह आदिलशाह को हुक्म दिया कि शिवाजी को सिर मत उठाने दो। उसे मुगलाई प्रदेशों से दूर कर्नाटक में जागीर देकर उसकी सेवा से फायदा उठाओ। पूना-कोंकण आदि प्रदेशों से निकालकर उसके किलों को जीत लो। मुगल-दरबार और बीजापुर-दरबार मिलकर शिवाजी का दमन करने की तैयारियां करने लगे। अस्तु। शिवाजी शत्रुओं की इन चालों को समझते थे। उन्होंने औरंगजेब के दक्षिण से उत्तर भारत को रवाना होते ही

बीजापुर-दरबार की अन्दरूनी दुर्बलताओं से लाभ उठा कर राज्य-विस्तार के लिए अपने वीर सिपाहियों को तैनात किया। इधर औरंगजेब को दक्षिण से उत्तर जाते देखकर, बीजापुर-दरबार के प्रधानमंत्री खवासखान और बेगम बड़ी साहिबा ने विद्रोही सरदारों का दमन करना शुरू किया। दरबार की नजर शिवाजी की उन्नति सफलताओं पर पड़ी। शिवाजी का दमन करने के लिए सेना भेजने का निश्चय किया गया। परन्तु शिवाजी के चमत्कारों के जादू के कारण उस सेना का सेनापति बनने को कोई उद्यत नहीं होता था। बीजापुर-दरबार ने इस काम के लिए अपने दरबार के विश्वासपात्र, अनुभवी सरदार अफजलखां को नियत किया।

अफ़ज़लखां की तलवार : शिवाजी का बघनखा

आततायिनमायान्तं हन्यादेवाविचारयन्[1]

बीजापुर-दरबार में अफ़ज़लखां (जो अब्दुल्ला भटियारा नाम से भी प्रसिद्ध था, भटियारा अर्थात् रसोई पकानेवाले खानदान में से था) अपनी शूरवीरता और दूरदर्शिता के लिए प्रसिद्ध था। बीजापुर की बड़ी बेगम ने शिवाजी का दमन करने के लिए दस हजार सिपाहियों के साथ इसे भेजा और हुक्म दिया कि शिवाजी का सिर दरबार में हाजिर करो। अफ़ज़लखां ने भरे दरबार में शिवाजी को कैदी के रूप में पेश करने की प्रतिज्ञा की। अफ़ज़लखां चाहता था कि रक्तपात किए बिना कुटिल नीति द्वारा ही शिवाजी को हथिया ले। शिवाजी की सेनाओं के चुपचाप छिपे गुरिल्ला हमलों से वह भी घबराता था। उसने तलवार और कुटिल नीति दोनों के प्रयोग करने का निश्चय किया। दस हजार घुड़सवार फौज के साथ बीजापुर से प्रस्थान किया। बीजापुर से अफ़ज़ल की सेना उत्तर की ओर तुलजापुर की ओर बढ़ी। तुलजापुर का मन्दिर महाराष्ट्र के पवित्रतम मन्दिरों में से एक विशेष मन्दिर माना जाता है। यहां भोंसला वंश की अधिष्ठात्री देवी भावनी की प्रतिमा थी। अफ़ज़लखां ने सोचा कि मौका देखकर या तो सीधा मराठा राष्ट्र के पूर्वी भाग से पूना पहुंचकर शिवाजी के दक्षिणी किलों को घेरा जाए अथवा शिवाजी को किसी प्रकार से खुले मैदान के रणांगण में बीजापुर की भारी साधन सम्पन्न सेना से मुकाबला करने पर बाधित किया जाए।

१. हत्यारे घातक को मारने से मत चूको।

शिवाजी की भावनाओं को ठेस पहुंचाने और प्रत्यक्ष आक्रमण के लिए उत्तेजित करने के लिए अफ़ज़लखां ने तुलजापुर की भवानी-प्रतिमा को तोड़कर उसे चक्की में पिसवाकर चूर-चूर कर दिया। इतने में उसे पता लगा कि शिवाजी तो राजगढ़ छोड़कर प्रतापगढ़ के किले में आ गए है। इसपर अफ़ज़लखां ने पूना की ओर प्रस्थित होने के स्थान पर अपनी सेनाओं की बागडोर प्रतापगढ़ की ओर मोड़ी। लौटते हुए रास्ते में तीर्थस्थानों में मूर्तियों तथा ब्राह्मणों को अपमानित करते हुए, वह राक्षस सतारा से उत्तर की ओर तेईस मील पर 'वाई' नामक स्थान पर पहुंचा। यह प्रदेश बीजापुर-दरबार के अधीन था। यहीं अफ़ज़लखां ने अपना शिविर लगाया। यहां ठहरकर उसने शिवाजी को पर्वतीय प्रदेशों से बाहर मैदान में लाने के लिए कई प्रकार के रंग-ढंग किए। स्थानीय मराठा सरदारों द्वारा शिवाजी को जीते-जी गिरफ्तार करने की भी कोशिश की परन्तु शिवाजी अपनी तथा शत्रु की शक्ति को खूब समझते थे। वे समझते थे कि दूसरे के मैदान में जाकर विजय पाना कठिन है। वे इस कोशिश में थे कि बीजापुर की सेनाएं पहाड़ियों में घिर जाएं और वहां मराठे अपने गुरिल्ला आक्रमणों से उन्हें हैरान करें। अफ़ज़लखां ने विठोजी हैबतराव नाम के मराठे सरदार को अपने सिपाहियों के साथ जावली के पास बीजापुर की सेना के साथ आने की आज्ञा दी। खंडोजी खोपड़े नाम के सरदार ने वहीं पहुंचकर रोहिडखेरे इलाके की देशमुखी मिलने की आशा पर शिवाजी को गिरफ्तार कर हाज़िर करने की लिखित प्रतिज्ञा की। अफ़ज़लखां मराठे सरदारों की सहायता से शिवाजी को गिरफ्तार करने की कोशिश में था। वह मुगल बादशाहों की भांति, राजपूताना के राजपूत राजाओं को एक-दूसरे से लड़ाकर, भेद-नीति द्वारा अपना उद्देश्य पूरा करना चाहता था। मुगल बादशाह सफल हो गए थे, क्योंकि राजपूत राजाओं की प्रजाएं मूक और निर्जीव थीं। राजपूत राजाओं और उनकी

प्रजाओं के बीच में कई प्रकार की भेद-भाव की दीवारें खड़ी थीं। राजपूताना की जनता राजपूत राजाओं की मुसीबतों को अनुभव नहीं कर सकती थी। ठाकुरों और सरदारों ने जनता को जागृत नहीं होने दिया था। केवल उदयपुर के महाराणा प्रताप ने राजपूताना की साधारण भील जनता के साथ सीधा सम्बन्ध रखा। भील राणा के लिए मर मिटने को तैयार हो गए, और कोई भी प्रबल बादशाह चित्तौड़ की स्वाधीनता की पताका को न झुका सका। महाराष्ट्र में शिवाजी के व्यक्तित्व ने साधारण मराठा जनता को शिवाजी का भक्त बना दिया था। इने-गिने मध्यम श्रेणी के मराठा सरदारों की कुछ न चलती थी। शिवाजी की मूर्ति को देखते ही, उनका शंखनाद सुनते ही, मराठा जनता दक्खिनी और मुगलाई बादशाहों को छोड़कर शिवाजी की 'जय-जय' करने लगती थी। अफ़ज़लखां के धार्मिक अत्याचारों ने. उसकी मूर्ति-ध्वंस की नीति ने, मराठों को शिवाजी का अनन्य भक्त बना दिया। जनता की इस अटल भक्ति के कारण अफ़ज़लखां की भेद-नीति काम न आई। लाचार उसने सामपूर्ण छल-नीति द्वारा शिवाजी को जीतना चाहा। कृष्णाजी भास्कर नाम के दूत को शिवाजी के पास निम्नलिखित संदेश के साथ भेजा :

"तुम्हारे पिता मेरे गहरे दोस्त थे। तुम मेरे लिए अजनबी नहीं हो, मेरे पास आओ। मुझे मिलो। मैं अपने प्रभाव से तुम्हें कोंकण का प्रदेश और वे किले, जो इस समय तुम्हारे पास हैं, तुम्हारे नाम बीजापुर-दरबार से भी स्वीकृत करा दूंगा। बीजापुर-दरबार से तुम्हारे लिए अनेक प्रकार के फौजी और दीवानी सम्मानसूचक उपाधियां तथा पुरस्कार दिलाऊंगा। यदि तुम चाहोगे तो तुम्हें राजदरबार में सम्मान का स्थान दिया जाएगा और यदि तुम स्वयं उपस्थित न होना चाहोगे तो इससे मुक्त भी किया जा सकेगा।"

शिवाजी ने कृष्णाजी भास्कर का ब्राह्मणोचित सत्कार किया। एकान्त में उसकी धार्मिक भावनाओं को, तुलजापुर की प्रतिमा-भंग

आदि की घटनाएं सुनाकर उत्तेजित किया । अफज़लखां के दिल की टोह ली और पता लगा लिया कि अफज़ल उसके साथ छल-बल का प्रयोग करने में भी संकोच न करेगा । दूत के साथ पंडित गोपीनाथ पन्त को भेजा और अफज़लखां के साथ भेंट करने की सहमति प्रकट की और अफज़लखां से अपनी जीवन-रक्षा का आश्वासन चाहा । शिवाजी ने गोपीनाथ के द्वारा भेंट के समय अपनी ओर से अफज़लखां की रक्षा का आश्वासन दिया । साथ ही उसे अफज़लखां के सैन्य-बल तथा उसके असली भाव का पता लेने के लिए सावधान किया ।

पंडित गोपीनाथ ने मिलनसार नीति और चतुरता से अफज़लखां के दरबारियों से पता लगा लिया कि उसका असली भाव भेंट द्वारा शिवाजी को गिरफ्तार करने का है । पंडित गोपीनाथ ने वहां से लौट-कर शिवाजी के सामने सारी स्थिति रखी, और उन्हें अफज़लखां के द्वारा संभावित छल से सावधान तथा सतर्क कर स्वयं मौके से लाभ उठाने का संकेत किया ।

शिवाजी ने सारी स्थिति को समझ लिया । अफज़लखां चाहता था कि शिवाजी उसे 'वाई' के मैदान में मिलें । शिवाजी ने यह स्वीकार नहीं किया और प्रतापगढ़ किले के समीप भेंट का स्थान निश्चित करने पर आग्रह किया, और अफज़लखां से अपनी जीवन-रक्षा का आश्वासन चाहा । अफज़लखां ने इसे भी स्वीकार कर लिया । शक्ति-मद और उच्च स्थिति के अभिमान में अफज़लखां इस मांग को टाल न सका । वह समझता था कि एक बार यदि एकान्त में भेंट हो जाए तो मैं शिवाजी को अपने चंगुल से निकलने न दूंगा । जाल में फंसी मछली निकल नहीं सकती । रणांगण में न सही, एकान्त की भेंट में ही उसे तलवार की धार उतारकर सदा के लिए बीजापुर-दरबार के कंटक को उखाड़ दूंगा । अफज़लखां ने इस उत्सुकता और उत्कंठा में अपना मैदानी स्थान छोड़कर पहाड़ियों से घिरे स्थान पर भेंट करना स्वीकार किया । मगरमच्छ ने पानी से बाहर, रेतीले पथरीले मैदान

में शिवाजी को गिरफ्तार करने का, जीते-जी पकड़ने का संकल्प किया। शिवाजी ने वाई से प्रतापगढ़ किले के बीच के घने जंगलों के बीच में एक रास्ता बनाने की आज्ञा दी। रास्ते के दोनों ओर स्थान-स्थान पर बीजापुर की सेना के सिपाहियों के लिए खाने-पीने के सामान जुटाए गए। रतोंडी दर्रे के पास (महाबलेश्वर के बोम्बेया पाइण्ट के नीचे) अफजलखां 'पार' नाम के गांव की ओर बढ़ा। यह गांव प्रतापगढ़ किले से दक्षिण की ओर एक मील पर है। अफजलखां के सिपाहियों ने कयना नदी के निकास तक, टोलियां बनाकर पानी के छोटे-मोटे तालाबों के आसपास डेरे डाल लिए। गोपीनाथ पन्त ने शिवाजी को अफजलखां के 'पार' स्थान पहुंचने की सूचना दी। अगले दिन भेंट का समय नियत किया गया। प्रतापगढ़ किले के नीचे और कयना की घाटी पर अवस्थित ऊंचाई की समतल भूमि पर तम्बुओं से घिरी हुई चित्रित, सुसज्जित चांदनी खड़ी की गई। आलीशान गलीचे, दरिया तथा कीमती राजोचित शोभावाले आसन-मंच सजाए गए।

शिवाजी ने अपने-आपको इस भेंट के लिए तैयार किया। अंगरखे के नीचे लोहे का कवच पहना। सिर पर लोहे की टोपी के ऊपर पगड़ी बांधी। बायें हाथ की अंगुलियों में दो अंगूठियों में बघनखा और दाईं बांह की आस्तीन में बिछुआ छिपा रखा।

अपने साथ जीवमहाल और शम्भाजी कावजी नाम के मराठे सरदारों को लिया। दोनों विश्वासपात्र, शूरवीर, और तलवार चलाने के द्वन्द्व-युद्ध में अपने समय के इने-गिने वीरों में से थे। त्रिमूर्ति निश्चित कार्य के लिए प्रतापगढ़ से चली। रास्ते में राजमाता ने तीनों को सत्प्रेम-मिश्रित आशीर्वाद दिया। त्रिमूर्ति प्रतापगढ़ की तलहटी जाकर प्रतीक्षा करने लगी।

अफजलखां पालकी में सवार होकर दो सिपाहियों और सैयद [illegible] नामक प्रसिद्ध तलवार-वीर के स[illegible] भेंट के स्थान की ओर प्रस्थित हुआ। शेष सेना 'पार' स्थान पर रुकी रही। साथ में कृष्णा-

जी भास्कर और गोपीनाथ पन्त भी थे। शिविर में पहुंचते ही अफज़लखां उस शामियाने की शान-शौकत को देखकर खिसियाया और जागीरदार के लड़के की इस आनशान की सजावट पर खिजावट प्रकट की। गोपीनाथ पन्त ने वाक्चातुरी से उत्तर दिया कि यह सब सामान भेंट के बाद शिवाजी भेंट रूप में बीजापुर-दरबार की नजर में पेश करेंगे। शिवाजी के पास शीघ्र आने के लिए दूत भेजे गए। शिवाजी ने दूर से ही सैयद-बन्दा को देखकर कहा कि इसे अफजलखां के शिविर से दूर रखना चाहिए क्योंकि नियमानुसार दोनों ओर के दोनों रक्षक सिपाही ही होने चाहिए थे। शिवाजी के प्रतिवाद पर उसे रोक दिया गया। भेंट के लिए निश्चित शिविर में दोनों पहुंचे। दोनों ओर से चार-चार आदमी उपस्थित थे। दो-दो सशस्त्र सिपाही, एक-एक दूत तथा स्वयं शिवाजी और अफज़लखा। अफजलखां की कमर में तलवार लटक रही थी। शिवाजी निःशस्त्र थे। अफजलखां ऊंचे मंच पर था। शिवाजी मिलने के लिए मंच पर चढ़े और अफजलखां के सामने दरबारी सरदारों की भांति सम्मान प्रकट करने के लिए झुके। अफजलखां अपने स्थान से उठा। कुछ कदम आगे बढ़ा, और भुजाए फैलाकर शिवाजी का आलिगन करने लगा। शिवाजी कद में छोटे थे। अफजलखा के कंधों तक पहुंचते थे। अफजलखां ने एकदम अपनी पकड़ को सख्त किया, शिवाजी की गर्दन को बायें हाथ की पकड़ से दबोचा, और दायें हाथ से पास लटक रही तलवार को खींचकर शिवाजी की कमर पर वार किया। शिवाजी इस अचानक आक्रमण से, गले में दबोचा जाने से, कराहने लगे परन्तु एकदम अपने-आपको संभाल लिया, गुरु रामदास के अमोघ राममन्त्र 'शठेशाठ्यम्' का स्मरण किया। एकदम बायें हाथ को अफजलखां की कमर में भोंककर उसकी अन्तड़ियों को फाड़ दिया और दायें हाथ के बिछुए को उसके दूसरे पार्श्व में भोंक दिया। आहत अफजलखां को अपनी पकड़ ढीली करनी पड़ी। शिवाजी ने

पाने को उसके पेट में से निकाल लिया। मंत्रणागार से छलांग मार-कर उतर पड़े और बाहर खड़े अपने साथियों से जा मिले।

दोनों पक्षों के सिपाहियों में भगदड़ मच गई। सैयद बन्दा ने अपनी तलवार का वार करके शिवाजी को रोकना चाहा, और उनके सिर पर वार भी किया। लोहे की टोपी पर तलवार टकराकर कुन्द हो गई। शिवाजी के जीवमहाल नाम के मराठा सरदार ने सुनरी (छोटी तलवार) लेकर उसका मुकाबला किया। इतने में जीवमहाल दूसरी तलवार लेकर आ गया और सैयद बन्दा की दाईं भुजा काट दी और उसे यमलोक का यात्री बनाया। इधर अफजलखां को पालकी में बिठाकर उसके साथी उसे शिविर की ओर ले जाने लगे। सम्भाजी कावजी ने पालकी उठानेवालों की टांगों पर भरपूर गहरी चोटें कीं। उन्होंने पालकी वहीं छोड़ दी। तत्पश्चात कावजी ने अफजलखां का सिर धड़ से अलग कर दिया, और कटे हुए सिर को शिवाजी के सामने पेश किया।

शिवाजी और उनके दोनों साथी प्रतापगढ़ किले के शिविर में पहुंचे और वहां पहुंचकर उन्होंने अफजलखां के मारे जाने और स्वयं सुरक्षित वापस पहुंचने का संकेत करने के लिए तोपों के गोले छोड़े। तोपों की आवाज सुनते ही रास्ते में दोनों ओर के जंगल में छिपी हुई मराठी सेना वानरों की टोलियों की भांति बाहर निकल आई और बीजापुर-दरबार की सेना को चारों ओर से घेर लिया। तीन-चार घण्टों तक घमासान युद्ध होता रहा। मराठी सेना रणक्षेत्र के चप्पे-चप्पे से परिचित थी। बीजापुर-दरबार की सेना को भारी हार खानी पड़ी। अनेकों कैद किए गए। खजाना तथा युद्ध-सामग्री मराठी सेना के हाथ आई। कैदियों में अफजलखां की औरतें और उसके लड़के और लम्बाजी भोंसले और झंझारराव घोर भी थे। अगले दिन सब कैदी प्रतापगढ़ किले में शिवाजी के सामने पेश किए गए। शिवाजी ने सब कैदियों को रिहा कर उन्हें घर जाने के लिए आवश्यक सामग्री

के साथ विदा किया। मराठा सिपाहियों को उनकी शूरवीरता तथा चतुराई के लिए पारितोषिक तथा भेंटें दी गईं। इस युद्ध में आहत सिपाहियों को औषधोपचार के साथ इनाम भी दिए गए। मराठा सरदारों को हाथी, घोड़े और कीमती कपड़ों के साथ हीरे-जवाहरात भी दिए गए।

अफजलखा को जीतने के कारण मराठी सेना ने उत्साहित होकर दक्षिण कोंकण और कोल्हापुर के जिलों मे आक्रमण किए। शिवाजी ने बीजापुर की सेना को हराकर पन्हाला का किला अपने अधीन कर लिया (१६५६-१६६०)।

इस विजय ने मराठी जनता में चमत्कारी उत्साह पैदा कर दिया। बीजापुर-दरबार इस पराजय से झुंझला उठा। तात्कालिक मुसलमान शासकों के अत्याचारों से पीड़ित जनता शिवाजी को अपना रक्षक समझने लगी। घटनाओं के इस क्रम में, वीरता और चतुराई की सन्धि की सुनहरी किरणों में, आर्यजाति को अपने भाग्योदय के सूर्य की आकर्षक दिव्य झलक दीखने लगी। वीर भूषण कवि ने उस समय की आर्यजनता के इन भावों को अपनी कविता की झंकार के साथ प्रकट कर शिवाजी को जाति-रक्षक राष्ट्रीय नेता के रूप में चित्रित किया।

शिवाजी की अग्नि-परीक्षा

इस विजय ने शिवाजी तथा उनकी मंडली को मुगल-दरबार और बीजापुर-दरबार की सम्मिलित कोपाग्नि की परीक्षा में डाल दिया। इस परीक्षा में सफलतापूर्वक उत्तीर्ण होने के लिए शिवाजी को अनेकों बलिदान करने पड़े, अपने-आपको दिन-रात रणचण्डी की लपटों में झुलसाए रखना पड़ा।

बीजापुर दरबार के अली आदिलशाह द्वितीय ने शिवाजी जैसे अदम्य विद्रोही का दमन करने के लिए स्वयं सेना के साथ रणांगण में उतरने का निश्चय किया। इसी समय सीदी जौहर नाम के अबीसीनियन गुलाम ने बीजापुर-दरबार को लिखा कि यदि दरबार उनकी कर्नूल की जागीर स्वीकार कर ले, तो वह बीजापुर-दरबार की ओर से शिवाजी का दमन करने के लिए अपनी सेनाएं देने को तैयार है। बादशाह ने सीदी जौहर की मांग को स्वीकार किया और उसे सलावतखां की उपाधि देकर भारी सेना के साथ शिवाजी को परास्त करने के लिए भेजा। दूसरी तरफ पूना ज़िले में मुगल सेनाएं शिवाजी के किले छीन रही थीं। इधर सीदी जौहर ने शिवाजी पर आक्रमण कर दिया। शिवाजी की सेनाओं को मैदान छोड़ना पड़ा और शिवाजी अपनी सेनाओं के साथ पन्हाला किले में घिर गए। शिवाजी इस समय लाचार थे। उन्होंने सीदी जौहर को गुप्त पत्र लिखकर उसके साथ दोस्ती करने का प्रस्ताव किया। महत्त्वाकांक्षी सीदी जौहर ने शिवाजी के साथ मिलकर दक्षिण में स्वतन्त्र राज्य स्थापित करने की आशा से शिवाजी के साथ एकान्त में भेंट करनी

स्वीकार कर ली। शिवाजी ने मध्य रात्रि में, दो-तीन आदमियों के साथ सीदी जौहर से मुलाकात की और स्वयं उसके दरबार में उपस्थित हुए। वहां दोनों ने एक-दूसरे की रक्षा की प्रतिज्ञाएं कीं। शिवाजी किले में वापस चले गए। सीदी जौहर किले का घेरा डाले पड़ा रहा।

बीजापुर-दरबार में जब समाचार पहुंचा तो बादशाह अत्यन्त क्रोधित हुआ और सेना लेकर स्वयं दोनों विद्रोहियों को दण्ड देने के लिए राजधानी से चल पड़ा। बादशाह ने दूत भेजकर सीदी जौहर को अपने साथ मिलाने की कोशिश की, पर सफलता न हुई। बादशाही सेना मिरज तक जा पहुंची। सेना की एक टुकड़ी कुछ आगे पन्हाला किले की ओर बढ़ी। शिवाजी एक रात को अपने परिवार तथा पांच हजार सिपाहियों के साथ किले से निकलकर चले गए। पन्हाला किला बिना युद्ध के आदिलशाह के अधीन हो गया।

बाजीप्रभु का बलिदान

शिवाजी के किले से निकल भागने की खबर बादशाह को मिली। उसने तत्काल सीदी जौहर के बेटे सीदी अजीज और अफजलखां के बेटे फजलखां को बीजापुरी सेना के साथ शिवाजी का पीछा करने के लिए भेजा। शिवाजी ने मलकपुर के समीप पहाड़ी घाटी के गहरे नाले के प्रवेश-स्थान पर बाजी प्रभु को सात सौ वीरों के साथ बीजापुरी सेना का मुकाबला करने के लिए तैनात किया; और आदेश दिया कि जब तक मराठी सेना विशालगढ़ किले में सुरक्षित न जा पहुंचे तब तक वह वहां बीजापुरी सेना का मुकाबला करता रहे। बीजापुर की सेना ने तीन बार आक्रमण किया और बाजीप्रभु के सिपाहियों को पीछे हटा-कर शिवाजी का पीछा करने के लिए रास्ता खोलने का यत्न किया। परन्तु बाजीप्रभु और उसके वीर साथियों ने मर्मापिली के वीरों की

भांति कट-कटकर गिरना स्वीकार किया, परन्तु बीजापुर की सेना को एक कदम भी आगे बढ़ने न दिया। *बाजीप्रभु का एक-एक सिपाही* बीजापुर-दरबार के सैंकड़ों सिपाहियों को रोक रहा था। ये वीर जी-जान पर खेल रहे थे। जान हथेली पर थी, कान विशालगढ़ किले की तोप की आवाज़ की प्रतीक्षा में थे। बाजीप्रभु अकेला था। उसके सामने सीदी जौहर का बेटा और अफज़लखां का बेटा खून का बदला लेने के लिए बेताब थे, परन्तु बाजीप्रभु ने जीते-जी किसीको आगे न बढ़ने दिया। आखिर चारों ओर से आक्रमण होने लगे। बाजीप्रभु जख्मी होकर गिर गया। घाव गहरा था पर अब भी यह चिन्ता *सता रही थी कि कहीं शिवाजी के विशालगढ़ पहुंचने से पहले* शत्रु-सेना को इस घाटी में रास्ता न मिल जाए!! जख्मों की पीड़ा उसे न सताती थी। वह बलिदान का अमृत पान कर अमर हो चुका था, परन्तु शिवाजी की चिन्ता उसे चिन्तित कर रही थी। इधर शिवाजी, बाजीप्रभु के सात सौ वीर मराठों और बीजापुर की सेनाओं की घमासान लड़ाई की कल्पना कर, हवा की गति से विशालगढ़ की ओर बढ़ रहे थे। बाजीप्रभु धराशायी हो चुका था, परन्तु अभी तक प्राण बाकी थे। शिवाजी ने अपने वीर सिपाही की इच्छा को पूरा किया। विशालगढ़ के किले से तोप दागी गई। 'शाबाश बाजीप्रभु' की ध्वनि ने आकाश को गुंजा दिया। इस आवाज़ को सुनकर बाजीप्रभु ने शांति और सन्तोष के साथ प्राणों को छोड़ा। विशालगढ़ की सेनाएं 'बाजीप्रभु की जय' के नाद गुंजाने लगीं। हताश बीजापुरी सेना वीर बाजीप्रभु के रक्तामृत से सिंचित घाटी को पार न कर सकी और वहां से वापस चली गई।

औरंगज़ेव और शिवाजी

औरंगज़ेब उत्तर भारत में अपने भाइयों को परास्त करके और अपने पिता को राजबन्दी बनाकर दिल्ली के सिंहासन पर आसीन हो गया था। आलमगीर औरंगज़ेब बादशाह के नाम से शासन करने लगा। सबसे पहले उसकी दृष्टि दक्षिण के स्वतन्त्र मुसलमान और हिन्दू राजाओं की ओर गई। अफ़ज़लखां के वध तथा बीजापुर-दरबार के अन्दरूनी झगड़ों ने उसको इस बात के लिए तैयार किया कि वह शिवाजी का दमन करने के लिए अपनी सेनाओं का रुख उधर करे। इसके लिए अपने अनुभवी और प्रसिद्ध सेनापति शायस्ताखां को भारी सेना के साथ शिवाजी का दमन करने के लिए भेजा। औरंगज़ेब ने यह समझ लिया कि दक्खिन की आदिलशाही कुछ दिनों की मेहमान है। उसने इस बात को ताड़ लिया था कि दक्खिन में उसका असली प्रतिद्वन्द्वी शिवाजी है। शिवाजी की वीरता, चतुराई, स्फूर्ति और संगठन-कुशलता को वह अच्छी तरह समझता था। उत्तर भारत तथा दिल्ली की विद्रोही शक्तियों को नियन्त्रण में रखने के लिए एवं अपने सिंहासन को सुरक्षित रखने के लिए अभी वह दिल्ली व आगरा में ही रहना चाहता था। आगरा व दिल्ली में रहते हुए भी उसका मन शिवाजी की बढ़ती हुई शक्ति को रोकने में व्यग्र रहता था। उसने अपने मामा, अपने समय के प्रसिद्ध अमीर, नवाब शायस्तखां को राजा यशवन्तसिंह के साथ शिवाजी का दमन करने के लिए भेजा।

शायस्ताखां ने दक्षिण में आते ही बीजापुर-दरबार को दक्षिण

अहमदनगर से पूना, चाकण तथा उत्तरी कोंकण पर आक्रमण करने शुरू किए, बीजापुरी सेनाओं के आक्रमण के कारण शिवाजी विशाल गढ़ किले में घिर गए।

इधर शायस्ताखां की सेनाओं ने उत्तर महाराष्ट्र में शिवाजी के किलों को जीतना शुरू किया। शिवाजी इधर न आ सकते थे। २५ फरवरी, १६६० को शायस्ताखां ने अहमदनगर से विशाल सेना के साथ दक्षिण की ओर कूच किया। पूना के पूर्व की ओर दक्षिण भाग तक वह बेरोक-टोक बढ़ता गया। सोनवाड़ी के रास्ते से बारामती पहुंचा। १८ अप्रैल को पूना से दक्षिण में छब्बीस मील की दूरी पर शिरवाल स्थान पर पहुंचा। शायस्ताखां जिन किलों को जीतता था, उनपर अपने सरदार तैनात करता जाता था। उसकी सेना ने राजगढ़ के चारों ओर के गांवों को तहस-नहस कर दिया।

शिरवाल से शिवपुर होती हुई मुगल सेना पहली मई को ससवाड (शिवपुर से पूर्व तेरह मील और पूना से दक्षिण-पूर्व सोलह मील पर है) जा पहुंची। यहां मराठी सेना के तीन हज़ार सिपाहियों ने मुगल-सेना को रोकना चाहा, परन्तु लड़ाई के बाद उन्हें मैदान छोड़ना पड़ा। मुगल-सेना ने ससवाड के आसपास आक्रमण करने शुरू किए। वह पुरंदर किले की तलहटी के गावों में लूटमार करने लगी। मराठी सेना ने उनपर हमला किया। मुगल-सेना ने दृढ़ता से मुकाबला किया। मुगल-सेना के कई सिपाही मारे गए, कई ज़ख्मी हुए। इतने में मुगल-सेना में और भी सिपाही आ सम्मिलित हुए। उन्होंने मराठी सेना का पीछा किया। पुरंदर किले की गोलाबारी की बौछार में भी मुगल-सेना ने मराठा सिपाहियों का पीछा किया। मराठा सेना को तितर-बितर होना पड़ा। उत्तर कोंकण में मुगल-सेना ने सेनापति इस्माइल के अधीन इस किले को भी जीत लिया। यह प्रदेश सलाबतखां दक्खनी के अधीन कर दिया गया। शायस्ताखां अपनी सेना के साथ पूना पहुंचा और बरसात के मौसम तक यहीं

रहने का निश्चय किया, परन्तु मराठी सेना ने इसके आसपास के प्रदेशों को उजाड़ कर दिया। बरसात में नदियों में बाढ़ आने से मुगलाई सरहद और पूना के बीच में यातायात में बहुत कठिनाई होने लगी। सामान की तंगी के कारण सेना को बहुत मुश्किल होने लगी। इस दशा में शायस्ताखां ने अपना सैन्य शिविर पूना से हटाकर चाकण में ले जाने का निश्चय किया। यह स्थान अहमदनगर और मुगलाई प्रदेश के समीप था। यहां सब प्रकार की रसद और सहायता बेरोक-टोक पहुंच सकती थी।

चाकण का किला और फिरंगजी की वीरता

चाकण का किला युद्ध-संचालन की दृष्टि से एक महत्वपूर्ण स्थान था। इसके पूर्व में भीमा नदी के उथले पाट हैं, कोई कठिन पहाड़ी दर्रा इसके पास नहीं है। मुगलाई प्रदेश से यहां तक आना-जाना सरलता से हो सकता था। शायस्ताखां को इसे अधीन कर लेने से अहमदनगर से रसद मंगाने में बहुत आसानी थी। अहमदनगर से कोंकण जाने का छोटे से छोटा मार्ग चाकण के किले की छाया में है। शायस्ताखां पूना से १६ जून को चलकर २२ जून को चाकण के समीपवर्ती प्रदेश में पहुंचा। सारी स्थिति का अवलोकन कर सरदारों के साथ परामर्श कर किला जीतने की योजना बनाई। चाकण का किला चौतरफा घेरेवाला और आगे बढ़े हुए अग्रभागोंवाला था। इसके चारों कोनों पर चार गुम्बद थे। इसकी ऊंची दीवारें तीस फुट गहरी और पन्द्रह फुट चौड़ी खाई से घिरी हुई थीं। पूर्व की ओर इसका प्रवेशद्वार था। वहां तक पहुंचने के लिए छः दरवाजों में से गुजरना पड़ता था। शिवाजी ने इस किले की रक्षा का भार अपने पिता शाहजी के समय के अनुभवी सरदार फिरंगजी नरसाला को

न हो सकता हो, तो आत्मसमर्पण कर दे। इस समय शिवाजी बीजापुर-दरबार की सेनाओं के साथ पन्हाला के किले में उलझे हुए थे। लगभग दो महीने तक फिरंगजी ने जी-जान पर खेलकर किले की रक्षा की।

शायस्ताखां ने किले को जीतने के लिए अपनी सेना के चार भाग किए। चारों ओर से किले को घेरकर, खाइयां खोदकर, किले की चारदीवारी तक पहुंचने के लिए सुरंग बनाने की योजना की गई। उचित स्थानों पर तोपों को तैनात करने के लिए ऊंचे प्लेट-फार्म खड़े किए गए। दक्षिण के मुगलाई किलों से तोपें मंगाकर तैन की गई। चौमासे की बरसात की भारी बौछारों ने तोपों के स्थ बनाने तथा सुरंग बनाने में काफी दिक्कतें खड़ी कीं और उधर कि के रक्षक मराठों ने गोलों की मार से मुगल-सेना को काफी हैर भी किया। परन्तु मुगल-सेना गोलों और पानी की बौछार में आ ही बढ़ती गई। चौवन दिनों की कोशिश के बाद उत्तर-पूर्व कोने गुम्बद के नीचे सुरंग लगा दी गई। १४ अगस्त, १६६० ई० के ती बजे दोपहर को इसमें विस्फोट किया गया। बुर्ज और उसके रक्ष विस्फोट की आग से भस्मसात् हो गए। मुगलों ने आक्रमण किया परन्तु दीवार के पीछे किले के रक्षक मराठों ने एक और दीवा खड़ी कर ली थी, और उसकी छाया में खड़े होकर इन्होंने मुगल सिपाहियों पर अस्त्रों, पत्थरों तथा आग के गोलों से हमला किया मुगलों की आक्रमणकारी सेना को रुकना पड़ा। रात-भर उसी रक्त रंजित भूमि में डटे रहे। १५ अगस्त के प्रातःकाल फिर आक्रमण शुरू किया। दीवार पर चढ़ गए। मुख्य किले को छीन लिया। अनेक रक्षकों को मौत के घाट उतारा। शेष सिपाहियों को किले में धकेल दिया। थोड़ी देर में किले के मराठा रक्षकों को मैदान छोड़ना पड़ा किलेदार फिरंगजी वीरतापूर्वक एक-एक इंच भूमि के लिए लड़ा आखिर सहायता न आने पर आत्मसमर्पण कर दिया। शायस्ताखां

ने उसकी शूरवीरता से मुग्ध होकर उसे बादशाही सेना में निमन्त्रित किया। उसने ईमानदार स्वामिभक्त की भांति इस मांग को ठुकरा दिया। किला मुगलों के हाथ में आ गया था। फिरंगजी शेष बची हुई सेना के साथ शिवाजी के पास चला गया।

इस प्रकार दो वर्षों तक मुगल सेनापति शिवाजी के प्रदेशों में लूटमार मचाते रहे। मराठे सरदार भी मौका देखकर उन्हें परेशान करते। मार्च, १६६३ में शिवाजी की घुड़सवार सेना के सेनापति नेताजी पालकर का पीछा किया गया। नेताजी ने अपने अश्वारोहियों के साथ मुगलाई सेना के शिविर पर आक्रमण किया था। मुगलाई सेना के सात हज़ार घुड़सवारों ने उसका पीछा किया। इससे बचने के लिए नेताजी पालकर को पचास मील प्रतिदिन की रफ्तार से भाग-दौड़ करनी पड़ी। मुगलाई ने बीजापुर से पांच मील की दूरी तक उसका पीछा किया। रुस्तम-ज़मान ने मुगल सरदारों को आगे बढ़ने से रोका और कहा कि यह प्रदेश अजनबी सेना और सिपाहियों के लिए खतरनाक है, और स्वयं नेताजी पालकर का पीछा करने की प्रतिज्ञा की। नेताजी पालकर मुगलाई सेना के चंगुल से ज़ख्मी होकर बच निकला। इस भाग-दौड़ में उसके तीन सौ घुड़सवार मारे गए।

मुगलाई और बीजापुर-सेनाओं द्वारा मराठा शक्ति तथा सेना के तितर-बितर होने पर भी मराठा-मण्डल विचलित नहीं हुआ। इन पराजयों ने मराठा वीरों को निराश और हताश करने के स्थान पर अधिक कर्मशील और उत्साही बना दिया। बाजीप्रभु के बलिदान ने, फिरंगीजी की चाकण दुर्ग की रक्षा में प्रकट की गई अद्भुत वीरता ने, मराठा सरदारों तथा मराठा-मण्डल को जी-जान पर खेलने के लिए उतावला कर दिया। हरएक मराठा शत्रु को परेशान करने के लिए भयंकर से भयंकर आपत्ति को निमन्त्रण देने में अपना अहोभाग्य

साथ मुगलाई सेना पर कई हमले किए और उन्हें परेशान किया। इन लड़ाइयों में शिवाजी के कई किले छिन गए थे। उत्तर-दक्षिण दोनों ओर से मुगलाई तथा बीजापुर-सेनाएं शिवाजी पर आक्रमण कर रही थीं। ऐसे समय में शिवाजी ने अपने वीरों को रणचण्डी का संदेश सुनाने और विजेता शायस्ताखां को वीरता और चातुरी का पाठ पढ़ाने के लिए, रात के कड़े पहरे में पूना के शानदार महलों के शयनागार में प्रवेश करके उसे जगाया और युद्ध के लिए ललकारा।

शिवाजी शायस्ताखां के शयनागार में

चाकण किले को जीतकर शायस्ताखां पूना को चला गया। वह उसने शिवाजी के बाल्यकाल के निवासस्थान और क्रीड़ास्थान में डेरा लगाया। अपनी सेनाओं के घेरे में सपरिवार विजय-यात्रा के आमोद प्रमोद की उमंगों को तृप्त करने के सब साधन जुटाए। इधर शिवाजी अपने घर में शत्रु को अधिष्ठित देखकर चैन से कैसे बैठ सकते थे! परन्तु क्या करते! शायस्ताखां और यशवन्तसिंह की सम्मिलित सेनाओं का मुकाबला करने के लिए उनके पास साधन न थे। ऐसे समय शिवाजी ने 'आत्मबलिदान' के अचूक ब्रह्मास्त्र का प्रयोग करने का निश्चय किया। अपने-आपको खतरे में डालने का निश्चय किया। अकेले ही रात को शायस्ताखां के शिविर में घुसकर उससे दो-दो हाथ करने का संकल्प किया।

शायस्ताखां सपरिवार पूना में शिवाजी के महलों में डेरा डाले हुए था। उसका परिवार तथा उसकी औरतें उसके साथ थीं। अन्तःपुर के चारों ओर रक्षकों, नौकरों और बाजा बजानेवालों के डेरे थे। कुछ दूरी पर, रास्ते के पार, सिंहगढ़ के दक्षिण की ओर राजा यशवन्तसिंह ने दस हजार सिपाहियों के साथ अपना शिविर लगाया हुआ था।

रमजान का महीना था। नवाब तथा उनके मुसलमान नौकर

दिन के उपवास के बाद रात को भोजन करके गहरी नींद में सो गए थे। शिवाजी ने अपने साथ एक हजार विश्वस्त सिपाही ले जाने के लिए चुने। मुगल-शिविर से एक मील दूरी पर, मुगल सेना-शिविर के दो पार्श्वों पर, नेताजी पालकर और मोरोपन्त के साथ सौ-सौ सिपाहियों की दो टुकड़ियां तैनात की गईं। बाबाजी बापूजी और चिमणाजी बापूजी को शिवाजी ने अपना शरीर-रक्षक चुना। मराठी सेना ने नियत समय पर शिवाजी के नेतृत्व में सिंहगढ़ से कूच किया। दस मील का अन्तर दिन-दिन में ही तय किया गया। शिवाजी पूना में रात होते-होते पहुंच गए। चार सौ चुने हुए सिपाहियों के साथ शिवाजी ने मुगल सेना-शिविर की सीमा में प्रवेश किया। मुगल पहरेदारों के रोकने पर अपने-आपको बादशाही सेना का दक्खिनी सिपाही बताकर अपने नियत स्थान पर जाने की सूचना दी। सैन्य-शिविर के एक एकान्त कोने में कुछ घंटे आराम किया। मध्य रात में मराठा टोली शायस्ताखां के निवास स्थान के पास पहुंची। शिवाजी को पूना शहर के कोने-कोने का पता था। जिस मकान में शायस्ताखां सो रहा था उसमें शिवाजी ने बाल्यकाल बिताया था। उसकी एक-एक ईंट का शिवाजी को ज्ञान था। रसोईघर में कुछ रसोइये आग जलाकर प्रातःकाल के भोजन की तैयारी कर रहे थे। इन्हें मराठा सिपाहियों ने चुपचाप यमलोक भेज दिया। रसोईघर और अन्तःपुरवाले कमरे की बीच की दीवार में एक छोटा-सा द्वार होता था। परन्तु शायस्ताखां ने अन्तःपुर को रसोईघर से पृथक् करने के लिए ईंटों द्वारा इस दरवाजे को चुनवाकर बंद करवा दिया था। मराठा सिपाहियों ने इन ईंटों को धीरे-धीरे निकालकर दरवाजा बनाना शुरू किया। हथौड़ों की चोटों और रसोईघर में आहत नौकरों की हाय-हाय ने कुछ नौकरों को जगा दिया। उन्होंने शायस्ताखां को आशंका की सूचना दी।

के लिए साधना की। शीघ्र ही दरवाज़ में एक आदमी के जाने का रास्ता निकल आया। शिवाजी चिमणाजी बापूजी के साथ सबसे पहले उस दरवाजे से अन्तःपुर में शायस्ताखां के शयनागार में प्रविष्ट हुए। दो सौ सिपाही भी उनके पीछे-पीछे अन्दर घुस गए।

यह स्थान कनातों से घिरा हुआ था। चादर की दीवारों के अन्दर चादर की दीवारें थीं। पर्दे के घेरे के अन्दर पर्दे के गोलाकार कनात लगे हुए थे। शिवाजी तलवार से उन पर्दों को चीरते-फाड़ते शायस्ताखां के शयनागार में पहुंच गए। हनुमान रावण के शयनागार में पहुंच गया! भयभीत स्त्रियों ने नवाब को जगाया। शिवाजी ने शायस्ताखां को तलवार हाथ में लेने से पहले ही दबोच लिया और अपनी तलवार की चोट से उसके हाथ का अंगूठा काट दिया। इसी समय किसी चतुर स्त्री ने शयनागार में जलते हुए लैम्प गुल कर दिए जिससे कमरे में अंधेरा छा गया। मराठा सिपाही अंधेरे में पानी के भरे बर्तन से टकराकर गिर पड़े। दासियों ने मौका देखकर शायस्ताखां को सुरक्षित स्थान पर पहुंचा दिया। मराठा सिपाहियों ने मार-काट जारी रखी।

अन्तःपुर के बाहर दो सौ मराठे सिपाहियों ने सोते हुए पहरेदारों को कत्ल कर उन्हें इस प्रकार असावधानी से पहरा देने की सजा दी और शायस्ताखां के नाम से बाजेवालों को बैण्ड बजाने का हुक्म दिया। बैण्ड की आवाज़ ने ज़ख्मी लोगों की चीख-पुकार और मरते हुए शत्रु-सिपाहियों की आहों को गुम कर दिया। सब तरफ गड़बड़ और परेशानी ही परेशानी दिखाई देने लगी। अन्तःपुर का शोरगुल क्षण-क्षण में भयंकर होता गया। कुछ समय बाद मुगल-सेना को पता चला कि उसके सेनापति पर शत्रुओं ने हमला कर दिया है। शायस्ताखां का बेटा अब्बुलफतह सिपाहियों के साथ अपने पिता की रक्षा के लिए घटनास्थल पर पहुंचा। यह वीर युवक कुछ समय तक मराठे [illegible]हि[illegible]ों से जूझता रहा। एक-दो मराठे सिपाहियों को तलवार के

घाट उतारा। आखिर जख्मी होकर धराशायी हुआ। एक और मुगल सरदार ने अन्तःपुर का दरवाज़ा बन्द पाया। रस्सी की सीढ़ी से ऊपर चढ़कर अन्दर जाने की कोशिश की, नीचे उतरा भी, परन्तु वह एकदम मराठा सिपाहियों की तलवारों का निशाना बन मौत का अतिथि बना।

शिवाजी ने देखा कि शत्रु जाग गया है, और सावधान हो गया है। शिवाजी झटपट अपने साथियों के साथ एक छोटे सीधे रास्ते से मुगल-शिविर से बाहर निकल गए। मुगल सिपाही उनको इधर-उधर तलाश करने में लग गए। शिवाजी शिविर से बाहर सुरक्षित निकल गए। मुगल सेना उनका पीछा न कर सकी।

यह घटना १६६३ ई० की ५ अप्रैल की रात को हुई थी। ६ अप्रैल को प्रात काल दरबारी लोग रात की मुसीबत के सम्बन्ध में शोक और सहानुभूति प्रकट करने के लिए शायस्ताखां के शिविर में आए। महाराजा यशवन्तसिंह भी आए। शायस्ताखां ने कटाक्ष के साथ उन्हें देखते ही कहा कि अच्छा, तुम अभी जीवित हो ? मैंने तो यह समझा था कि तुम शिवाजी को रोकते-रोकते मर चुके होगे। शायस्ताखां के शिविर में निराशा और मातम छा गया। उसका अपना हृदय दिन-प्रतिदिन इस पराजय से बुझने लगा। आत्मरक्षा के विचार से शायस्ताखां औरंगाबाद को चला गया। बादशाह ने जब इस घटना का वृत्तान्त सुना तो उसने शायस्ताखां की इस नालायकी और असावधानी पर क्रोध प्रकट किया और उसे बंगाल की तरफ सूबेदार बनाकर भेज दिया। औरंगज़ेब के शब्दों में बंगाल उन दिनों 'काला पानी' था। शायस्ताखां को बादशाह से मिलने का भी अवसर न दिया गया। जनवरी, १६६४ में शायस्ताखां दक्षिण का शासनभार शाहज़ादा मुअज्जम को देकर वहां से विदा हुआ।

सूरत में शिवाजी पर खूनी वार

सूरत शहर उस समय के समृद्ध सम्पत्तिशाली शहरों में प्रमुख शहर था। यह मुगल बादशाहों के समुद्र द्वारा होनेवाले विदेशी व्यापार का मुख्य केन्द्र था। इसी शहर से होकर मुसलमान हाजी (अरब की हज) यात्रा करने जाते थे। अभी इधर दक्षिण भारत के मुगल शासकों में परिवर्तन हो रहे थे कि उधर शिवाजी ने सूरत पर हमला कर दिया। वहां से लगभग दो करोड़ की सम्पत्ति लूटी। सूरत शहर के गवर्नर इनायतखां ने शिवाजी के आक्रमण करने की बात सुनते ही शहर को असुरक्षित दशा में छोड़कर सूरत के किले में शरण ली। शिवाजी की सेना ने शहर को दिल खोलकर लूटा। लूटने से पहले शिवाजी ने ६ जनवरी, १६६४ ई० को दूतों द्वारा शहर के गवर्नर और शहर के मुख्य व्यापारियों, हाजी सैयद बेग और बहराजी वोहरा और हाजी कासिम को सुलह की शर्तों के लिए बुला भेजा। परन्तु कोई उत्तर नहीं आया। चार दिन तक खूब लूटमार मची। शिवाजी ने अपने कुछ एक सिपाहियों को सूरत के किले के संरक्षकों के साथ लड़ाई में जुटा दिया। बहराजी वोहरा और हाजी सैयद बेग के महलों को लूटकर जला दिया गया। शिवाजी ने स्पष्ट घोषणा की कि मैं औरंगजेब द्वारा मराठा प्रदेश पर किए गए आक्रमण का बदला लेने के लिए ही आया हूं। मेरा सूरत के व्यापारियों से कोई झगड़ा नहीं। इस लूट में डच, अंग्रेज, पुर्तगीज, टर्किश और आर्मीनियन लोगों ने स्वयं आत्मरक्षा की।

इन्होंने शिवाजी के रास्ते में किसी प्रकार की रुकावट खड़ी नहीं की, परन्तु आत्मरक्षा के लिए उचित उपाय किए। सूरत शहर का शासक इनायतखां प्रत्यक्ष मुकाबले में शिवाजी के सामने न आ सका। उसने एक नौजवान दूत को शिवाजी के पास सुलह की शर्तों के लिए भेजा। शिवाजी ने कहा कि मैं तुम्हारे शासक की भांति छिप-

कर लड़नेवाला 'औरत' नहीं हूं। नौजवान ने एकदम उत्तर दिया कि हम औरत नहीं हैं और तुम्हारे लिए हमारे पास और भी संदेश है। यह कहते-कहते छिपी हुई खंजर निकालकर शिवाजी पर हमला कर दिया। शिवाजी के पास खड़े शरीर-रक्षक ने तलवार के एक वार से घातक का हाथ काट गिराया। वह युवक हाथ कटने पर भी न रुका। उसने शिवाजी पर हमला किया। दोनों लड़ते-लड़ते भूमि पर लोट-पोट होने लगे। शिवाजी के कपड़ों पर रक्त के छींटे देखकर उनके अनुयायियों ने समझा कि शिवाजी मारे गए हैं। यह बात सुनते ही मराठा अफसरों ने शत्रु-कैदियों की हत्या करने का फौजी हुक्म दे दिया। इतने में शिवाजी के शरीर-रक्षक ने घातक युवक का सिर धड़ से अलग कर दिया। शिवाजी सुरक्षित रूप में सिपाहियों के सामने उपस्थित हुए और तत्काल कैदियों की हत्या की मनाही की। इतने में मुगल-सेना के आने की खबर मिली। शिवाजी १० जनवरी के प्रातःकाल वहां से लूट का सामान लेकर विदा हो गए और कोंकण में जाकर रुके। १७ जनवरी को शाही फौज वहां आई। बादशाह ने राज-कर में कमी करके पीड़ित व्यापारियों के साथ सहानुभूति प्रकट की और अनेक डच व्यापारियों को, उनके शिवाजी के साथ न मिलने तथा सूरत के व्यापारियों की सहायता करने के उपलक्ष्य में आयात माल पर 'कर' की मात्रा कम करके प्रोत्साहन दिया।

मिर्ज़ा जयसिंह और शिवाजी

शिवाजी की गति को रोकने के लिए बीजापुर-दरबार और मुगल-दरबार ने अफ़ज़लखां और शायस्ताखां भेजे। उनके साथ मराठे सरदार और राजपूत सरदार भी सहायक के रूप में भेजे थे। परन्तु कोई भी शिवाजी की गति को न रोक सका। शिवाजी आकाश में उड़ते थे। एकदम देखते-देखते पहाड़ियों, घाटियों की गहराइयों में छिप जाते थे, फिर पता नहीं कब कहां से आ धमकते थे। अंग्रेज़, डच, आर्मीनियन उनकी स्फूर्ति, चतुरता, वीरता और फुर्तीलेपन से परेशान थे। वे उन्हें भूत-प्रेतों का अधिनायक, मौत का पैगाम समझते थे। उस समय के बादशाह उनके नाम से, उनके घुड़सवार सिपाहियों की टापों से, थर-थर कांपते थे। कई बार यम के द्वार से उन्हें सही-सलामत वापस आया देखकर उस समय की जनता उन्हें अमर एवं अजेय समझने लगी थी। उनके साहस तथा निडर व्यवहार से मौत भी उनकी चेरी बन गई थी। भयंकर मुसीबत में भी मृत्यु जैसे उनको अपने वरदान से सुरक्षित रखती थी।

औरंगज़ेब हैरान था और परेशान था। वह दिन-प्रतिदिन शिवाजी के बढ़ते प्रभाव को कम करने के लिए कोशिश करता था, परन्तु जितनी वह कोशिश करता उतना ही शिवाजी का प्रभाव और उनकी गति प्रबल होती जाती थी। औरंगज़ेब के दरबार में महाराज जयसिंह अपनी वीरता, दूरदर्शिता और नीति-कुशलता के लिए प्रसिद्ध था। उसने मुगल-दरबार में रहते हुए मुगलों की सभ्यता को, भाषा तथा साहित्य को इस तल्लीनता से अपनाया था

कि उसे मिर्ज़ा जयसिंह के नाम से स्मरण किया जाता था। औरंगज़ेब जसवन्तसिंह से निराश हो ही चुका था। अब उसने मुअज़्ज़म को दक्खिन का शासक बनाकर मिर्ज़ा जयसिंह के साथ शिवाजी को कैद करने के लिए भेजा। जयसिंह भारी सेना तथा विस्तृत अधिकारों के साथ दक्षिण में आया। उसने आते ही सेना-संचालन इस ढंग से करने का निश्चय किया जिससे बीजापुर-दरबार और शिवाजी दोनों पर उसकी आंख रहे। दोनों आपस में मिल न सकें। शिवाजी ने जयसिंह से मुलाकात करने के लिए कई यत्न किए। जयसिंह ने एक न सुनी। एक के बाद एक करके शिवाजी के जीते हुए प्रदेशों को अधीन करने का क्रम जारी किया।

यह परिस्थिति देखकर शिवाजी ने मिर्ज़ा जयसिंह को एक पत्र भेजा जिसमें हिन्दू-राष्ट्र की तत्कालीन अवस्था का सजीव चित्र खींचकर उन्हें मातृभूमि के हित के लिए मुगलों की गुलामी और देशद्रोह छोड़ने की प्रेरणा की। यह पत्र शिवाजी की राजनीतिज्ञता का आदर्श है, जिसमें उन्होंने राजनीति के सभी अंगों—साम, दाम, दण्ड और भेद—का पूरा उपयोग किया है।

शिवाजी का पत्र जयसिंह के नाम

सरे सर्वरां राजए राजगां। चमनबन्द बुस्ताने हिंदोसतां।।

ऐ सर्दारों के सर्दार, राजाओं के राजा (तथा) भारतोद्यान की क्यारियों के व्यवस्थापक!

जिगर बंद फ़र्ज़ानए रामचंद।
जे तो गर्दने राजपूतां बुलंद।।

ऐ रामचन्द्र के चैतन्य हृदयांश, तुझसे राजपूतों की ग्रीवा उन्नत है।

क़बीतरजे तो दौलते बाबरी।
जे बख्ते हुमायूं तुरा यावरी।।

तुझसे बाबरवंश की राज्यलक्ष्मी अधिक प्रबल हो रही है (तथा)

शुभ भाग्य से तुझमे सहायता (मिलती) है।

जवां बख्त जैशाह बा राय पीर।
जे सेवा सलामो दरूदे पिज़ीर॥

ऐ जवान (प्रबल) भाग्य (तथा) वृद्ध (प्रौढ़) बुद्धिवाले जयशाह सेवा (अर्थात् शिवा) का प्रणाम तथा शुभकामना स्वीकार कर।

जहां आफ़रीनत् निगाहदार बाद।
तुरा रहनुमायद सुए दीनो दाद॥

जगत् का जनक तेरा रक्षक हो (तथा) तुझको धर्म एवं न्याय का मार्ग दिखावे।

शनीदम कि बर क़स्दे मन् आमदी।
बफ़दहे दयारे दकिन आमदी॥

मैंने सुना है कि तू मुझपर आक्रमण करने (एवं) दक्षिण प्रांत को विजय करने आया है।

जे खूने दिलो दीदए हिंदुआं।
तु ख्वाही शवी सुर्खरू दर जहां॥

हिन्दुओं के हृदय तथा आंखों के रक्त से तू संसार में लाल मुंह वाला (यशस्वी) हुआ चाहता है।

न दानी मगर की सियाही शवद।
कज़ीं मुल्को दीं रा तबाही शवद॥

पर तू यह नहीं जानता कि यह (तेरे मुंह पर) कालिख लग रही है क्योंकि इससे देश तथा धर्म को आपत्ति हो रही है।

अगर सर दमेदरगरेबां कुनी।
व नज़्ज़ारए दस्तो दामां कुनी॥

यदि तू क्षणमात्र गरेबान में मुंह डाले (अपने विषय में विचार करे) और यदि तू अपने हाथ और दामन पर (विवेक) दृष्टि डाले।

बबीनी कि ईं रंग अज़ खून कीस्त।
दरशो जहां रंग ईं रंग चीस्त॥

तो तू देखे कि यह रंग किसके खून का है और इस रंग का (वास्तविक) रंग दोनों लोकों में क्या है (लाल या काला)।

तु खुद आमदी गर बफ़तहे दकिन।
शुदे फ़र्श राहत सरो चश्मे मन॥

यदि तू स्वयं (अपनी ओर से) दक्षिण-विजय करने आता (तो) मेरे सिर और आंख तेरे रास्ते में बिछ जाते।

शुदम हमरे काबत् ब फौजे गरां।
सुपुर्दम बतो अज करां ता करां॥

मैं तेरे घोड़े के साथ बड़ी सेना लेकर चलता (और) एक सिरे से दूसरे सिरे तक (भूमि) तुझे सौंप देता (विजय करा देता)

वले तू जे औरंगज़ेब आमदी।
बाइग्वाय जाहिद फ़रेब आमदी॥

पर तू तो औरंगज़ेब की ओर से (उस) भद्रजनों के धोखा देने-वाले के बहकावे में पड़कर आया है।

नादानम् कुनूं चू बबाजम् बतो।
न मर्दी बुवद् गर बसाजम बतो॥

अब मैं नहीं जानता कि तेरे साथ कौन खेल खेलूं। (अब) यदि मैं तुझसे मिल जाऊं तो यह मर्दानगी (पुरुषत्व) नहीं है।

कि मर्दां न दौरां निवाज़ी कुनुद॥
हिज़ब्रां न रुवाहबाज़ी कुनुद्॥

क्योंकि पुरुष लोग समय की सेवा नहीं करते। सिंह लोमड़ीपना नहीं करते।

वगर चारः साज़म बतेग़ो तबर।
दो जानिब रसद हिंदुआ रा ज़रर॥

और अगर तलवार तथा कुठार से काम लेता हूं तो दोनों ओर हिंदुओं को ही हानि पहुंचती है।

दरेग़ा कि तेग़म जेहद अज मियां।

जुज अजवहें खूं खुर्दने ॥···

बड़ा खेद तो यह है कि···खून के अतिरिक्त किसी अन्य कार्य के निमित्त मेरी तलवार को मियान से निकलना पड़े।

चु तुर्की वर्दी कारज़ार आमदे।
वरे शेर वर्दी शिकार आमदे॥

यदि इस लड़ाई के लिए तुर्क आए होते तो (हम) शेरमर्दों के निमित्त (घर बैठे) शिकार आए होते।

वले आं सियहकारे बेदादो दीं।
कि देवस्त दर सूरते आदमीं॥

पर वह न्याय तथा धर्म से वंचित पापी जो कि मनुष्य के रूप में राक्षस है।

चु फ़ज्ले जे अफ़ज़ल नयामद पदीद।
ना शाइस्तकारी जे शाइस्तःदीद॥

अफज़ल खां से कोई श्रेष्ठता न प्रकट हुई (और) शाइस्ताखां की कोई योग्यता न देखी।

तुरा वरगुमारद पए जंगे मा।
कि दारद न खुद ताबे आहंगे मा॥

(तो) तुझको हमारे युद्ध के निमित्त नियत करता है क्योंकि वह स्वयं तो हमारे आक्रमण के सहने की योग्यता रखता नहीं।

नख्वाहद कि अज़ जम्रए हिंदुआं।
न मानद क़वीपंजए दर जहां॥

(वह) चाहता है कि हिंदुओं के दल में कोई बलशाली संसार में न रह जाए।

वहम कुश्तःओ खस्तः शेरां शवंद।
शिगलां हिजब्रे नायस्ता शवंद॥

सिंहगण आपस ही में (लड़-भिड़कर) घायल तथा श्रांत हो जाएं जिससे कि गीदड़ जंगल के सिंह बन बैठें।

डई राज चूंदर सर ग्रायद तुरा।
फ़सूनश मगर बर गियायद तुरा॥

यह गुप्त भेद तेरे दिमाग में क्यों बैठता ? प्रतीत होता है कि उसका जादू तुझे बहकाए रहता है।

बसे नेको बद दर जहां दीदई।
गुलोखार ग्रज बोस्ता चीदई॥

तूने ससार में बहुत भला-बुरा देखा है। उद्यान से तूने फूल ग्रौर कांटे दोनों संचित किए हैं।

न बायद कि बामा नबर्द ग्रावरी।
सरे हिन्दुग्रां जेरे गर्द ग्रावरी॥

यह नहीं चाहिए कि तू हम लोगों में युद्ध करे (ग्रौर) हिन्दुग्रों के सिरों को धूल में मिलावे।

वदी पुख्त.कारी जवानी मकुन।
जे सादी मगर यादगीर ई सखुन॥

ऐसी परिपक्व कर्मण्यता (प्राप्त होने) पर भी जवानी (यौवनोचित कार्य) मत कर, प्रत्युत सादी के कथन को स्मरण कर—

न हरजा मुरक्कव तवां ताखतन।
कि जाहा सिपर बायर ग्रंदाखतन॥

सब स्थानों पर घोड़ा नहीं दौड़ाया जाता। कहीं-कहीं ढाल भी फेंककर भागना उचित होता है।

पलंगा बगीरां पलगी कुनंद।
न बाजंगमा खानःजंगी कुनंद॥

व्याघ्र मृगादि पर व्याघ्रता करते हैं। सिंहों के साथ गृहयुद्ध में प्रवृत्त नहीं होते।

चु ग्राबस्त दर तेगे बुर्रानि तो।
चु तावस्त दर ग्रस्पे जौलाने तो॥

यदि तेरी काटनेवाली तलवार में पानी है; यदि तेरे कूदनेवाले

घोड़ में दम है,

ब बायद् कि बर दुश्मने दी जनी ।
बुनो बेखे रा बरकनी ॥

(सो) तुमको चाहिए कि धर्म के शत्रु पर आक्रमण करे (एवं) उसकी जड़-मूल खोद डाले ।

अगर दावरे मुल्क दारा बुदे ।
बमी नीज़ लुत्फो मदारा बुदे ॥

अगर देश का राजा दाराशिकोह होता तो हम लोगों के साथ भी कृपा तथा अनुग्रह के वर्ताव होते ।

वले तूने जसवंत दादी फरेब ।
ब दिल दर न कर्दी ज़राज़ो नशेब ॥

पर तूने जसवंतसिंह को धोखा दिया (तथा) हृदय में ऊंच-नीच नहीं सोचा ।

ज़ेरूबाहबाज़ी ने सेर आमदी ।
बजङ्गे हिज़ब्रां दिलेर आमदी ॥

तू लोमड़ी का खेल खेलकर अभी अघाया नही है (और) सिंहों से युद्ध के निमित्त ढिठाई करके आया है ।

अज़ी तुर्कताज़ी चे आयद तुरा ।
हवायत सुराबे नुमायद तुरा ॥

तुमको इस दौड़-धूप से क्या मिलता है, तेरी तृष्णा तुझे मृगतृष्णा दिखलाती है ।

बदां सिफ्ल:मानी कि जेहदे बरद ।
उरू से बचंगाल खेल आवरद ॥

तू उस तुच्छ व्यक्ति के सदृश है जो कि बहुत श्रम करता है (और) किसी सुन्दरी को अपने हाथ में लाता है ।

वले बर न अज़ बागे हुस्नश खुरद ।
बदस्ते हरीफ़ बरा बसपुरद ॥

पर उसकी सौंदर्य-वाटिका का फल स्वयं नहीं खाता (प्रत्युत) उसको अपने प्रतिद्वन्द्वी के हाथ में सौंप देता है।

चि नाज़ी तु बर मेहने ग्रा नाबकार।
बदानी सरंजामे कारे जुझार॥

तू उस नीच की कृपा पर क्या अभिमान करता है? तू जुझारसिंह के काम का परिणाम जानता है?

बदानी कि बर बच्चए छत्रसाल।
चेसां ख्वासस्त ओ ता रसानद ज़वाल॥

तू जानता है, कुमार छत्रसाल पर वह किस प्रकार से आपत्ति पहुंचाता था?

बदानी कि बर हिन्दुआने दिगर।
नयामद चे अज़ दस्ते आकीनःवर॥

तू जानता है कि दूसरे हिन्दुओं पर भी उस दुष्ट के हाथ से क्या-क्या विपत्तियां नहीं आईं।

गिरफ्तम् कि पैवंद बस्ती दी।
नु नामूस रा शिकस्ती बदो॥

मैंने मान लिया कि तूने उससे सम्बन्ध जोड़ लिया है और कुल की मर्यादा उसके सिर तोड़ी है।

बरां देव दामे अज़ी रिश्तः चीस्त।
कि महकम तर अज़बंदे इज़ार नीस्त॥

(पर) उस राक्षस के निमित्त इस बन्धन का जाल क्या वस्तु है क्योंकि यह बन्धन तो इज़ारबन्द से अधिक दृढ़ नहीं है।

पए कामे खुद ऊन दादर हज़र
जे खूने निरादर जे जाने पिदर॥

वह तो अपने इष्ट साधन के निमित्त भाई के रक्त (तथा) बाप के प्राण लेने से भी नहीं डरता।

चि कर्दी बशाहेजहां याद कुन ॥

यदि तू राजभक्ति की दुहाई दे तो तू यह स्मरण कर कि तूने शाहजहां के साथ क्या वर्ताव किया।

अगर बहरःदारी जे फर्ज़ानगी।
जनी लाफ़े मर्दी श्रो मर्दानगी॥

यदि तुझको विधाता के यहां से बुद्धि का कुछ भाग मिला है (और) तू पौरुष तथा पुरुषत्व की बड़ मारता है।

जे सोज़े वतन तेग़ रा ताब देह।
जे अश्के सितम दीदःगां आब देह॥

तो तू अपनी जन्मभूमि के संताप से तलवार को तपावे (तथा) अत्याचार से दुखियों के आंसू से (उसपर) पानी दे।

न मारा बहम् वक्ते पैकार हस्त।
कि बर हिंदुओं कार दुश्वार हस्त॥

यह अवसर हम लोगों के आपस में लड़ने का नहीं है क्योंकि हिंदुओं पर (इस समय) बड़ा कठिन कार्य पड़ा है।

जनो बच्चओ मुल्को इमला के मा।
बुतो माबिदो आबिदे पाके मा॥

हमारे लड़के-बाले, देश, धन, देव, देवालय तथा पवित्र देवपूजक—

हमः रा तबाहीस्त अज़ कारे ऊ।
बजाए रसीदस्त आ ज़ारे ऊ॥

इन सबपर उसके काम से आपत्ति पड़ रही है। (तथा) उसका दुःख सीमा तक पहुंच गया है,

कि चंदे चुकारश बमानद चुनों।
निशाने न मानद जे मा बर ज़मीं॥

कि यदि कुछ दिन तक उसका काम ऐसा ही चलता रहा (तो) हम लोगों का कोई चिह्न (भी) पृथिवी पर न रह जाएगा।

तअज्जब कि एक इस्तए मुग़लां।

बरी पहन मुल्कम् हुक्मरां।

बड़े आश्चर्य की बात है कि एक मुट्ठी-भर मुगल हमारे (इतने) बड़े देश पर प्रभुता जमाएं।

न ई चीर.दस्ती जे मर्दानगीस्त।

बर्बी गर तुरा चश्मे फ़र्जानगीस्त॥

यह प्रबलता (कुछ) पुरुषार्थ के कारण नहीं। यदि तुझको समझ की आंख है तो देख,

चसां ऊ बमा मोह.बाजी कुनद।

चसा बर रुख्श रंगसाजी कुनद॥

(कि) वह हमारे साथ कैसी गोटियावाली करता है और अपने मुंह पर कैसा-कैसा रंग रंगता है।

कशद् पान मारा ब जंजीरेमा।

बदुर्रद् सरेमा ब शमशीरे मा॥

हमारे पांवों को हमारी ही सांकलों में जकड़ देता है (तथा) हमारे सिरों को हमारी ही तलवारों से काटता है।

मरा जहद बायद करावां नमुद।

पए हिंदुओं हिंदो दीने हुनूद॥

हम लोगों को (इस समय) हिंदू, हिन्दुस्तान तथा हिंदू धर्म (की रक्षा) के निमित्त बहुत अधिक यत्न करना चाहिए।

बनायद कि कोशेमो राए जनेम।

पए मुल्के खुद दस्तों पाए जनेम॥

हमको चाहिए कि यत्न करें और कोई राय स्थिर करें (तथा) अपने देश के लिए खूब हाथ-पांव मारें।

ब शमशीरो तदबीर आबे दहेम।

ब तुर्का ब तुर्की जवाबे दहेम॥

तलवार पर और तदबीर पर पानी दें (अर्थात् उन्हें चमकाव) और तुर्कों को जवाब में (जैसे का तैसा) दें।

ब जसवंत गर तू मुवाफ़िक शवी।
ब दिल दर्राए मा मुनाफ़िक शवी ॥

यदि तू जसवंतसिंह से मिल जाए और हृदय से उस कपट-कर्म के पेंडे पड़ जाए,

ब राना दमी हमदमे हमदमी ॥
ये बायद कि कारे बर आयद हमी ॥

(तथा) राना से भी तू एकता का व्यवहार कर ले, तो आशा है बड़ा काम निकल जाए।

जे हर्सू बता जेदो जंग आवरेद।
सरे मारस जेरे संग आवरेद ॥

चारों तरफ से धावा करके तुम लोग युद्ध करो। उस सांप सिर को पत्थर के नीचे दबा लो (कुचल डालो)।

क चंदे ब पेचद वर अंजामे खेश।
नेयारद बमुल्के दकिन दामे खेश ॥

ताकि कुछ दिनों तक वह अपने ही परिणाम के सोच में पड़ा र (और) दक्षिण प्रांत की ओर अपना जाल न फैलावे।

मन ईं सू मर्दाने नेजःगुज़ार।
अज़ो हर दोशाहां बर आराम दार ॥

(और) मैं इस ओर भाला चलानेवाले वीरों के साथ इन दोनों बादशाहों का भेजा निकाल लूं।

ब अफ़वाजे ग़ुर्रिदा मानिंदे मेग।
बेबारम अबर दुश्मनां आबे तेग़ ॥

मेघों की भांति गरजनेवाली सेना से दुश्मनों पर तलवार का पानी बरसाऊं।

ब शोयम् जेदुश्मना नामो निशां।
जे लोहे दकिन अज़करां ताकरां ॥

का नाम तथा चिह्न धो डालूं।

अजां पस् व मर्दाने पैमूदःकार।
दजंगी सवाराने नेजःगुजार।।

इसके पश्चात् कार्यदक्ष शूरों तथा भाला चलानेवाले सरदारों के साथ,

चु दरियाय पुर् शोरिशो मौजज़न।
बर आयम व मैदां जे कोहे दकिन।।

लहर लेती हुई तथा कोलाहल मचाती हुई नदी की भांति दक्षिण के पहाड़ों से निकलकर मैदान में आऊं,

शवम ज़दतरे हमरकाबे शुमा।
अज़ो बाज पुर्सम हिसाबे शुमा।।

और अत्यन्त शीघ्र तुम लोगों की सेवा में उपस्थित होऊं और फिर उससे तुम लोगों का हिसाब पूछूं।

जे हर चार सू सख्त जंग आवरेम।
बरो अर्सए जंग तंग आवरेम।।

(फिर हम लोग) चारों ओर से घोर युद्ध उपस्थित करें और लड़ाई का मैदान उसके निमित्त संकीर्ण कर दें।

बदेहली रसानेम अफ़वाजरा।
बदां खानाए खस्तः अमवाजरा।।

हम लोग अपनी सेनाओं की तरगों को दिल्ली में, उस जर्जरीभूत घर में, पहुंचा दें।

जे नामश् न औरंग मानद न ज़ेब।
न तेगे तअद्दीन न दामे फरेब।।

उसके नाम में से न तो औरंग (राजसिंहासन) रह जाए और न ज़ेब (शोभा) रहे; न उसकी अत्याचार की तलवार (रह जाए) न कपट का जाल।

बरारेम जूए पर अज खूने नाव।

बरूहे बुजुर्गां रवानेम आब ॥

हम लोग शुद्ध रक्त से भरी हुई एक नदी बहा दें। (और उसमें) अपने पितरों की आत्माओं का तर्पण करें।

बनेरूए दादारे जां आफरीं।
बसाज़म जायश बज़ेरे ज़मीं ॥

श्यामनारायण, प्राणों के उत्पन्न करनेवाले (ईश्वर) की सहायता से हम लोग उसका स्थान पृथ्वी के नीचे (कब्र में) बना दें।

न ईं कार बिसियार दुशवार हस्त।
दिलो दीदओ दस्त दर्कार हस्त ॥

यह काम (कुछ) बहुत कठिन नहीं है। (केवल यथोचित) हृदय, आंख तथा हाथ की आवश्यकता है।

दो दिल यक शवद् बेशकुन्द् कोहरा।
परागंदगी आरद् अंबोहरा ॥

दो हृदय (यदि) एक हो जाएं तो पहाड़ को तोड़ सकते हैं (तथा) समूह के समूह को तितर-बितर कर सकते हैं।

अज़ो दर् मरा गुफ्तनीहा बसेस्त।
कि दर नामः आवुर्दनश राय नेस्त ॥

इस विषय में मुझको तुझसे बहुत कुछ कहना (सुनना) है, जिसका पत्र में लाना (लिखना) (युक्ति) सम्मत नहीं है।

बख्वाहम कि रानेम बाहम सखुन।
ने यारेम बे सूद रंजो मेहन ॥

मैं चाहता हूं कि हम लोग परस्पर बातचीत कर लें जिसमें कि व्यर्थ दुःख तथा श्रम न झेलें।

चु ख्वाही बे आयम बदीदारे तो।
बगोश आवरम राजे गुफ्तारे तो ॥

यदि तू चाहे तो मैं तुझसे साक्षात करने आऊं (और) तेरी
[illegible] का भेद श्रवण-गोचर करूं।

बखल्वत कुशाएम रुए सखन।
कुशाम शानः वर पेचे मूए सखुन।

हम लोग वातरूपी सुन्दरी का मुख एकांत में खोल। (और) मैं उसके बालों के उलझन पर कंघी फेरूं।

वे दामाने तदवीर दस्त श्रावरेम।
फुसूने बरां देव मस्त श्रावरेम॥

यत्न के दामन पर हाथ धरें। (और) उन्मत्त राक्षस पर कोई मन्त्र चलावें।

तराजे त राहे सुए काने ख्वेश।
फराजेम दर दो हां नामे ख्वेश॥

अपने कार्य (सिद्धि) की ओर का कोई रास्ता निकालें (और) दोनों लोकों (इहलोक तथा परलोक) में अपना नाम ऊंचा करें।

बतेगो वग्रस्पो बमुल्को वदी।
कि हर्गिज़ गजंदन न श्रायद ग्रज़ीं॥

तलवार की शपथ, घोड़े की शपथ, देश की शपथ तथा धर्म की शपथ करता हूं कि इससे तुझपर कदापि (कोई) आपत्ति नहीं आएगी।

जे अन्जामे अफज़ल मशौ बदगुमां।
कि ग्रोरा न बुद रास्ती दरमियां॥

अफजलखां के परिणाम से तू शङ्कित मत हो क्योंकि उसमें सचाई नहीं थी।

जे जंगी सवाराने परखाशजू।
हज़ारों दो सद दर कमीं दाश्त ऊ॥

बारह सौ बड़े लड़ाके हब्शी सवार वह मेरे लिए घात में लगाए हुए था।

अगर पेश दस्ती न कर्दम बरो।
कि ईंनामः अकनूं नविश्ते बतो॥

यदि मैं पहले ही उसपर हाथ न फेरता तो इस समय यह पत्र तुझको कौन लिखता ?

मर बातो चश्मे चुनीं कार नेस्त ।
तुरा खुद वमन नीज़ पैकार नेस्त ॥

(पर) मुझको तुझसे ऐसे काम की आशा नहीं है (क्योंकि) तुझको भी स्वयं मुझसे कोई शत्रुता नहीं है ।

जवाबत बयाबम् अगर बाशवाब ।
शब आयम् बपेशे दो तनहा शिताब ॥

यदि मैं तेरा उत्तर यथेष्ट पाऊं तो तेरे समक्ष रात्रि को अकेला आऊं ।

नुमायम बतो नामःहाए निहां ।
कि बगिरिफ्तम अज जेबे शायस्तःखां ॥

मैं तुझको वे गुप्त पत्र दिखाऊं जो कि मैंने शाइस्तखां को जेब से निकाल लिए थे ।

जनम आबे अन्देशः बर दीदःअत ।
कुनम् दूर ख्वाबे पसंदीदः अत ॥

तेरी आंखों पर मैं संशय का जल छिड़कूं (और) तेरी सुखनिद्रा को दूर करूं ।

कुनम् रास्त् ताबीर ख्वाबे तुरा ।
वजां पस बगीरम् जवाबे तुरा ॥

तेरे स्वप्न का सच्चा-सच्चा फलादेश कहूं (और) उसके पश्चात् तेरा जवाब लूं ।

नयायद चुईं नाम. इमजाजे तो ।
मनो तेग़ बुर्रानों अफ़वाजे तो ॥

यदि यह पत्र तेरे मन के अनुकूल न पड़े (तो फिर) मैं हूं और काटनेवाली तलवार तथा तेरी सेना ।

चु मुर्नेद फ़र्दा कशद ख्वराम् ।

हिलालम् नेयाम अफ्गनद बरसलाम् ॥

कल जिस समय सूर्य अपना मुह संध्या में छिपा लेगा, उस समय मेरा अर्धचन्द्र (खड्ग) मियान को फेंक देगा (मियान से निकल आएगा) बस, भला हो।

मिर्जा राजा जयसिंह ने शशवाद में मुख्य शिविर कायम किया। शिवाजी से असन्तुष्ट हुए मराठे सरदारों को अपने साथ मिलाया। धन, राज और सम्मान के प्रलोभनों द्वारा अनेक मराठा-सरदारों को अपनी ओर किया। इधर शिवाजी भी यथाशक्ति मुगल-सेनाओं पर अचानक आक्रमण कर उन्हें भयभीत करने का यत्न करने लगे। परन्तु जयसिंह ने अपनी सेनाओं का सचालन इस ढंग से किया कि शिवाजी की ये चालें उनकी सेनाओं की गति को न रोक सकी। आखिर, पुरंदर के किले पर दोनों की मुठभेड़ हुई। पुरंदर के किले तक पहुंचने के लिए वज्रगढ़ का किला भी जीत लिया गया। तदनन्तर जयसिंह ने पुरंदर का किला जीतने के लिए उसके सामने तोपें तैनात कीं। पुरंदर के किले में दो हजार मराठा सिपाही थे। जयसिंह ने दिलेरखान के अधीन सेनाए भेजकर पुरंदर को घेर लिया। दो हजार मराठा सिपाही कई दिन तक मुगल सेनाओं को रोकते रहे। आखिरकार मुगल-सेना के सामने वे न टिक सके। पुरंदर किले के सरदार मुरार बाजीप्रभु ने अन्त में जान पर खेलने का निश्चय किया। वे चुने हुए नौ सौ मराठा सिपाही अपने साथ ले किले से बाहर निकल पड़े। दिलेरखां पांच हजार अफगान सिपाही और कुछ अन्य सिपाहियों के साथ पुरंदर के किले की दीवारों पर तोपों की संरक्षा में चढ़ने की कोशिश कर रहा था। मराठा सिपाही मुरार बाजीप्रभु के नेतृत्व में पठान सिपाहियों से जूझ पड़े। घमासान लड़ाई हुई। मुरार बाजीप्रभु ने मावला सिपाहियों के साथ पांच सौ पठानों को यमलोक भेजा। चुने हुए साठ मर-मिटनेवाले मराठा सिपाहियों के साथ मुरार बाजी-प्रभु मौत को हथेली पर रखे दिलेरखा के शिविर की ओर बिजली की

गति से बढ़े। एक-एक मावले वीर ने बीसियों पठानों को तलवार के घाट उतारा परन्तु अन्त में मुगल सिपाहियों ने सब मावलों को मार-काटकर धराशायी किया। मुट्ठी-भर मराठे मुगलों की समुद्र-समान भारी सेना का कब तक मुकाबला करते? परन्तु मुरार बाजीप्रभु को कोई न रोक सका। मुगल सिपाहियों की टोलियां उन्हें रोकने और उनसे दो-दो हाथ करने आती परन्तु उनकी तलवार की चमक से चकाचौंध हो लौट जातीं। मुगल महारथियों ने अभिमन्यु की भांति उनको रोकना चाहा परन्तु कोई न रोक सका। उन्होंने दोनों हाथों से तलवार चलाई। कोई पास न फटका। वे अकेले ही मुगल सिपाहियों को काटते हुए सेनापति दिलेरखां के शिविर में जा पहुंचे। दिलेरखां ने उन्हें आत्मसमर्पण करने के लिए कहा और दरबार में ऊंची पदवी देने का प्रलोभन दिया। मुरार बाजीप्रभु ने इसका जवाब तलवार से दिया और दिलेरखां पर वार करने को हाथ उठाया। दिलेरखां ने दिन-भर के थके पर वार किया, बाजीप्रभु का सिर धड़ से अलग हो गया। परन्तु कहा जाता है कि सिर धड़ से अलग होने पर भी, धड़ दोनों हाथों से तलवारें चलाता रहा। मरते-मरते कइयों को धराशायी कर गया। साथ में तीन सौ मावले सिपाही भी धराशायी हुए। बचे हुए सिपाही फिर किले में वापस चले गए। मुरार बाजीप्रभु के बलिदान की रोमांचकारी कहानी सुनकर अन्दर के शेष सिपाहियों ने जी-जान पर खेलने का निश्चय किया। अन्तिम दम तक लड़ते रहे। दो महीने के निरन्तर युद्ध ने किलेदारों की रसद को कम कर दिया था। इधर मुगल-सेनाओं ने किले के कई मुख्य भागों को जीत लिया था। किले के अन्दर रहनेवाले परिवारों की रक्षा तथा उन्हें व्यर्थ के रक्तपात से बचाने के लिए, शिवाजी ने जयसिंह के पास रघुनाथ बल्लाल को संधि के लिए भेजा। विजयी जयसिंह ने शिवाजी को स्वयं उपस्थित होकर आत्मसमर्पण करने के बाद संधि-चर्चा करने का अवसर देना स्वीकार किया। शिवाजी ने

आत्मरक्षा के आश्वासन पर भेंट करना स्वीकार किया। जयसिंह ने जीवन-रक्षा का आश्वासन दिया।

दस जून को प्रात काल नौ बजे पुरन्दर किले की तलहटी में जयसिंह के दरबार में शिवाजी की भेंट हुई। रघुनाथ पंडित ने शिवाजी के आने की सूचना दी। भेंट के समय कड़ा पहरा तैनात किया गया। जयसिंह ने भेंट के लिए आते हुए शिवाजी को संदेश भेजा कि यह भेंट उसी अवस्था में हो सकेगी यदि शिवाजी सर्वथा आत्मसमर्पण कर दें और अपने सब किले मुगल बादशाह के अधीन कर दें। शिवाजी ने शर्तें स्वीकार की और दो अफसरों के साथ भेंट के लिए प्रस्थित हुए। शिविर के दरवाज़े पर राजा जयसिंह ने आगे बढ़कर शिवाजी का आलिंगन किया और उन्हें अपने साथ बिठाया। सशस्त्र राजपूतों का कड़ा पहरा तैनात किया। यहां से पुरन्दर किले पर हो रही लड़ाई दिखाई देती थी। राजा जयसिंह ने पूर्वनिश्चित योजना के अनुसार शिवाजी के दरबार में प्रवेश करते ही, दिलेरखां को पुरन्दर किले पर हमला करने का इशारा किया। शिवाजी ने इस रक्तपात को व्यर्थ समझकर पुरन्दर का किला समर्पित करने का निश्चय प्रकट किया। जयसिंह ने संदेशहर भेजकर दिलेरखां को युद्ध बन्द करने और किले में बंद मराठा सिपाहियों को सुरक्षित बाहर जाने देने की आज्ञा दी। संदेशहर के साथ शिवाजी ने अपना आदमी भेजकर किले के संरक्षकों को किला दिलेरखां के अधीन करने की आज्ञा दी। परस्पर विचार-विनिमय के बाद निम्नलिखित शर्तें तय हुईं :

(१) तेईस किले मुगल बादशाह के अधीन किए गए।

(२) शेष बारह किले शिवाजी के अधीन रहने दिए गए।

इसके बदले शिवाजी को मुगल-दरबार में नौकरी करनी होगी और मुगल बादशाह के प्रति राजभक्ति का भाव प्रकट करना होगा। शिवाजी ने राजा जयसिंह को इस बात के लिए प्रेरित किया

कि मुगल-दरबार में उपस्थित होने से उसे मुक्त किया जाए। उसके स्थान पर उसका लड़का पांच सौ घुड़सवारों के साथ रहेगा। शिवाजी ने मुगल-दरबार के लिए, बीजापुर-दरबार तथा कुतुबशाही के विरुद्ध लड़ने और उनके प्रदेशों को मुगलों के लिए जीतने का भी आश्वासन दिलाया, परन्तु जयसिंह ने नहीं माना। इस पुरन्दर की संधि के बाद शिवाजी के कई साथी नेताजी पालकर आदि उन्हें छोड़कर बीजापुर-दरबार की सेना में भर्ती होने लगे। बीजापुर-दरबार तथा कुतुबशाही के बादशाहों ने शिवाजी और मुगल-सेना को एक होते देखकर अपनी सत्ता को खतरे में समझा। पुरन्दर की संधि के स्वीकार करने के अगले दिन मुगल-दरबार की ओर से शिवाजी को कई फरमान और सम्मानसूचक दरबारी पोशाक भी मिलीं।

शिवाजी और नेताजी पालकर ने राजा जयसिंह की सेनाओं के साथ मिलकर बीजापुर पर हमला किया। बीजापुर के बादशाह आदिलशाह ने मुकाबला किया। जयसिंह ने शिवाजी को पन्हाला किला जीतने के लिए नियत किया। इतने में समाचार मिला कि नेताजी पालकर बीजापुर-दरबार में मिल गया है। राजा जयसिंह ने उसको बड़ी जागीर देकर अपनी ओर लाने की कोशिश की। शिवाजी पन्हाला किला बीजापुर से न छीन सके। यह स्थिति देखकर राजा जयसिंह ने सोचा कि यदि शिवाजी को उत्तर भारत में न भेजा गया तो वे भी नेताजी पालकर की भांति शर्तों के उतार-चढ़ाव के द्वारा बीजापुर-दरबार से मिल जाएंगे और इस प्रकार से दक्खिन में मुगलों की बढ़ती हुई शक्ति तथा प्रभाव को पुनः हानि पहुंचने की सम्भावना हो जाएगी। इसलिए जयसिंह ने बादशाह औरंगजेब को शिवाजी को दरबार में उपस्थित होने की स्वीकृति देने के लिए बार-बार लिखा। राजा जयसिंह शिवाजी को दक्खिन से दूर रखकर दक्खिन की स्वतन्त्र रियासतों को अधीन करना चाहता था। शिवाजी औरंगजेब के छलपूर्ण व्यवहार से शंकित थे। वे

जानते थे कि दक्खिन से दूर होते ही उनके पीछे महाराष्ट्र की जनता को संगठित करनेवाला कोई न रहेगा। इस समय तक मराठे वीरों के बलिदान से महाराष्ट्र में आत्माभिमान की जो ज्वाला प्रदीप्त हुई थी, वह मन्द पड़ जाएगी। शिवाजी दुविधा में थे। पुरन्दर की संधि के बाद राजा जयसिंह के कहे को टाल न सकते थे।

उनके बालसखा वीर भी चिन्तित थे। औरंगज़ेब ने शिवाजी को दरबार में उपस्थित होने की स्वीकृति दे दी थी। शिवाजी को तसल्ली देने के लिए राजा जयसिंह ने शिवाजी की जीवन-रक्षा की शपथ ली। राजा जयसिंह का पुत्र रामसिंह औरंगज़ेब के दरबार में प्रतिनिधि था। उसने भी शिवाजी को सुरक्षित वापस भेजने की प्रतिज्ञा की। शिवाजी पुरन्दरसंधि की शर्तों के सम्बन्ध में बादशाह के साथ दरबार में उपस्थित होकर स्पष्टीकरण भी करना चाहते थे। यदि सम्भव हो सके तो बीजापुर-दरबार को मटियामेट करने के बदले, मुगल-दरबार का दक्षिण में प्रतिनिधि बनने का मौका मिले, तो उससे भी लाभ उठाना चाहते थे।

सब अवस्थाओं पर विचार कर यह उचित समझा गया कि शिवाजी औरंगज़ेब के दरबार में उपस्थित हों। उत्तर भारत में जाने के बाद पीछे शासन का प्रबन्ध इस ढंग से किया गया कि यदि शिवाजी कैद किए जाएं या मारे भी जाएं, तब भी उनके अधीन प्रदेशों में अव्यवस्था न हो। माता जीजाबाई को राज-प्रतिनिधि (रीजेंट) नियत किया गया। सारा शासन-प्रबन्ध उनके निरीक्षण में किया जाना तय पाया। मोरोपन्त पेशवा, नीरोजी सोमदेव, अन्नाजी दत्ता को कोंकण के प्रान्तों में तैनात किया गया। हरएक किलेदार को सावधान किया कि वह दिन-रात सावधान रहकर मुगलों या बीजापुरियों के दावपेच में न फंसे। उत्तर भारत में प्रस्थित होने से पहले अपने स्वराज्य में शिवाजी ने अचानक निरीक्षण-भ्रमण किया और अपने कर्मचारियों को, अनुपस्थिति में भी, पहले की भांति

शिवाजी की आगरा-यात्रा

शिवाजी औरंगज़ेब के चंगुल में

शिवाजी मुगल बादशाही की सरक्षा मे यात्रा कर रहे थे। औरंगज़ेब ने राज-कर्मचारियों को शिवाजी का स्वागत करने का आदेश दिया हुआ था। स्थान-स्थान पर शिवाजी की उत्तर भारत की यात्रा की चर्चा फैल गई। जनता उत्सुकता, सम्मान और श्रद्धा के भाव से शिवाजी के दर्शनों के लिए पड़ावों पर आती। स्थानीय मुगल शासक शिवाजी को शाही अतिथि समझकर उनका आतिथ्य करते। औरंगाबाद पहुंचने पर वहां का गवर्नर सफसिकाखां शिवाजी के स्वागत के लिए न आया। उसने अपना भतीजा भेजकर उन्हें अपने दरबार में आने के लिए कहा। शिवाजी ने इसका उत्तर उसके पास न जाकर, सीधे अपने लिए नियत स्थान पर जाकर दिया। खां साहब को लाचार होकर मुगल सिपाहियों के साथ शिवाजी के पास उपस्थित होना पड़ा। शिवाजी औरंगाबाद से बादशाही मेहमान की भांति भेंट तथा उपहार लेते हुए नौ मई को आगरा पहुंचे। इन दिनों औरंगज़ेब का दरबार आगरा में था। बारह मई का दिन भेंट के लिए नियत किया गया। औरंगज़ेब पचासवीं वर्षगाठ मना रहा था। दरबार में औरंगज़ेब के स्वर्णतुलादान समारोह की तैयारियां हो रही थीं। दरबार मे चारों ओर जगमग और चमक-दमक थी। दरबार-आम में प्रतिष्ठित दरबारी, राजा, राजकुमार, सरदार, नवाब तथा अनेक राज्यों के प्रतिनिधि अपने-अपने स्थानों पर राजसी ठाट-बाट में सुसज्जित होकर उपस्थित थे। निश्चित समय पर राजा

जयसिंह के पुत्र रामसिंह ने शिवाजी के साथ दरबार में प्रवेश किया। शिवाजी के साथ उनका पुत्र शम्भाजी और उनके अपने दस सेनापति सरदार थे। शिवाजी की ओर से डेढ़ हज़ार मुनहरी मुहरें नज़र और छः हज़ार 'निसरा' (भेंट) के रूप में अर्पित की गईं। औरंगज़ेब ने राजसी आनबान के साथ कहा, "शिवाजी राजा, आगे आओ।" शिवाजी राजसिंहासन के सामने उपस्थित हुए और सम्मान-सूचक भाव प्रकट किए। औरंगज़ेब ने संकेत द्वारा शिवाजी को तीसरे दर्जे के सरदारों की श्रेणी में पंक्तिबद्ध खड़ा करने की आज्ञा दी। दरबार का कार्य यथापूर्व चलता रहा। औरंगज़ेब शिवाजी को उपेक्षा की अंधेरी खाई में धकेलकर, अपनी जन्मगांठ की खुशियों में मस्त हो गया।

इस अपमान को शिवाजी न सह सके। वे आपे से बाहर हो गए। झुंझलाए शेर की भांति गुर्राते वीर-केसरी शिवाजी को, जयसिंह का बेटा रामसिंह सान्त्वना देकर समझाने की कोशिश करने लगा। आकाश में विचरनेवाले स्वतन्त्र गरुड़ को पिंजरे में चैन कैसे हो सकता है? उन्होंने अपनी जीवन-संगिनी तलवार पर हाथ रखा। पता नहीं क्या होनेवाला है? भूषण कवि के शब्दों में औरंगज़ेब को उसके दादा की भांति, रनिवास में छिपने के लिए बाधित किया :

कैयक हज़ार जहां गुर्जबरदार ठाड़े,
करिके हुस्यार नीति पकरि समाज की।
राजा जसवन्त को बुलाय के निकट राख्यो
तेउ लखें नीरे जिन्हें लाज स्वामी काज की।
'भूषन' तबहुँ ठठक्त ही गुसलखाने,
सिंह लौं झपट गुनि साहि महाराज की।
हटकि हथियार फड़ बांधि उमरावन को,
कीन्ही अब नौरङ्ग ने भेंट शिवराज की ॥१॥
सबनके ऊपर ही ठाड़ो रहिबे के जोग,

ताहि खरो कियो जाय जारिन के नियरे।
जानि गैर मिसिल गुसैल गुसा धारि उर,
कीन्हों न सलाम न बचन बोले सियरे।
'भूषन' भनत महाबीर बलकान लागो,
सारी पातसाही के उड़ाय गये जियरे।
तमक ते लाल मुख सिवा को निरखि भये,
स्याह मुख नौरंग सिपाह मुख पियरे ॥२॥

'दरबारे-बादशाही' के लेखक के अनुसार, उस शोरगुल और बड़बड़ को सुनकर कड़कती आवाज़ में औरंगज़ेब ने पूछा, "क्या मामला है!!!" रामसिंह ने व्यंग से कहा, "पहाड़ों के शीतल वातावरण में विचरनेवाले शेर को आगरा के मदानों की गर्मी ने बेचैन और परेशान कर दिया है!" शिवाजी दुर्योधन के राजदरबार में अपमानित पांडवों की भांति, विवश हो दिल ही दिल में घुलकर रह गए। औरंगज़ेब की दासता में जकड़े हुए राजपूत जो इस समय दरबार में उपस्थित थे, वीर-केसरी शिवाजी के अपमान के प्रतिकार में चूं तक न कर सके। रामसिंह भी, अपने पिता जयसिंह द्वारा शाही अतिथि के रूप में भेजे गए, शिवाजी की मान-रक्षा के लिए कुछ न कर सका। स्वयं अपनी आन-शान तथा मान-मर्यादा को दूसरों के आगे समर्पित करनेवाले कर ही क्या सकते थे? औरंगज़ेब ने राजाज्ञा द्वारा शिवाजी को दरबार से बाहर भेज दिया और उन्हें उनके लिए नियत राजा जयसिंह के निवासस्थान में ठहरा दिया। अतिथि को राजकीय बन्दी बनाकर औरंगज़ेब ने अपनी नीतिहीनता का परिचय दिया। राजा जयसिंह ने शिवाजी को बड़ी-बड़ी आशाएं दिलाकर भेजा था, यह भी सम्भावना थी कि एक बार शिवाजी दरबार में उपस्थित हो जाएं और औरंगज़ेब के प्रति अधीनता प्रकट कर दें, फिर उन्हें दक्षिण का शासक भी बनाया जा सकता था।

बन्दी शिवाजी

परन्तु दूरदर्शी औरंगज़ेब स्वभाव से ही अविश्वासी था। वह अपने असली शत्रु को पहचानता था। वह समझता था कि आदिल-शाही व कुतुबशाही दरबार स्वयं अन्दरूनी अन्तःकलह के कारण जीर्ण-शीर्ण हो रहे हैं। शिवाजी मौका पाते ही उनको अपने अधीन करने से न चूकेगा। असली शत्रु शिवाजी है। इस मौके से लाभ उठाकर इसे कैद कर आगरा की सीमा के बाहर जयसिंह के निवास-स्थान में बन्दी कर दिया, और अपने विश्वस्त आदमियों का पहरा लगा दिया। औरंगज़ेब शिवाजी को दक्षिण से दूर आगरा अथवा अफगानिस्तान में कैदी रखकर, स्वयं दक्षिण को जीतने के मनसूबे बांधने लगा। शिवाजी ने असल स्थिति को ताड़ लिया। उन्होंने दरबार के प्रतिष्ठित व्यक्तियों द्वारा औरंगज़ेब के सामने उसकी राजनीतिक महत्त्वाकांक्षा को पूरा करनेवाले प्रस्ताव करने शुरू किए तथा बीजापुर और कुतुबशाही को जीतने के लिए अपनी सेवाएं समर्पित कीं। इस प्रकार सब सम्भव उपायों से दक्षिण में जाने की कोशिश की। परन्तु औरंगज़ेब पर किसी बात का असर न हुआ। शिवाजी इस विषम परिस्थिति से घबराए नहीं, वे दिन-रात यहां से निकल भागने की योजनाएं सोचने लगे। अन्त में निम्नलिखित योजना द्वारा औरंगज़ेब के चंगुल से निकल भागे।

शिवाजी ने दरबारियों तथा पहरेदारों को अपनी उदारता और विनयशीलता से अपने अनुकूल बनाना शुरू किया। उन्होंने औरंगज़ेब से प्रार्थना की कि उनके साथ आए हुए मराठे सिपाहियों को दक्षिण वापस भेजा जाए। औरंगज़ेब ने उनको वापस जाने की आज्ञा दे दी। इसमें औरंगज़ेब ने उन्हें अकेला करने का और शिवाजी ने उनको सुरक्षित दक्षिण में भेजकर वहां काम करनेवालों के सामने मुगलों की अमल स्थिति रखने का अवसर ढूंढा।

शिवाजी बीमार की भांति दिनचर्या व्यतीत करने लगे। हर रोज सायंकाल ब्राह्मणों, फकीरों और दरबारियों के लिए बहंगियों पर मिठाई के बड़े-बड़े भरे हुए टोकरे दान-उपहार के रूप में भेजे जाने लगे। शुरु में पहरेदार कई दिनों तक इन टोकरों की तलाशी तथा जांच-पड़ताल करते रहे परन्तु बाद में बिना जांच के उन बहंगियों तथा मिठाई के टोकरों को बाहर जाने देने लगे। १९ अगस्त को शिवाजी ने पहरेदारों को कहला भेजा कि मैं ज्यादा बीमार हो गया हूं और दिन-भर बिस्तर पर लेटा रहता हूं, अतः मुझे कोई पहरेदार पूछताछ से परेशान न करे।

शिवाजी वैरागी के वेश में

इस प्रकार व्यवस्था करने के बाद शिवाजी ने अपने भाई हीराजी फर्जन्द को अपने बिस्तर पर लिटा दिया। उसने अपने ऊपर चादर तान ली। चादर से बाहर निकले हुए हाथ में शिवाजी का सोने का कड़ा पहन लिया और बीमार बनकर सो गया। इधर शिवाजी सूर्यास्त के बाद उस दिन जानेवाली बहंगियों में से एक बहंगी में, एक ओर स्वयं तथा दूसरी ओर अपने बेटे शम्भाजी के साथ पहरे से बाहर निकल गए। उनके पीछे हर रोज की भांति मिठाई के टोकरे बाहर भेजे गए। किसीको किसी प्रकार का सदेह न हुआ। मिठाई के टोकरों को बाहर एकान्त स्थान में छिपाकर रख दिया गया। बहंगीवालों को विदा कर दिया गया। शिवाजी अपने पुत्र के साथ वहां से, आगरा से छः मील दूर, एक गांव में विश्वसनीय नीराजी रावजी के पास पहुंचे। जंगल में परस्पर परामर्श करके सारी टोली दो दलों में बंट गई। शिवाजी ने अपने पुत्र तथा नीराजी रावजी, दत्ताजी त्र्यम्बक और राघवमित्र मराठे के साथ अपनी देह पर भस्म रमाई, भभूत ली और हिन्दू साधुओं के वेश में मथुरा की राह ली। शेष साथियों ने अपने घर का रास्ता लिया।

इधर हीराजी फर्जन्द रात-भर तथा अगले दिन दुपहर तक बिस्तर में लेटा रहा। पहरेदार शिवाजी के सोने के कड़ों तथा नौकर को बीमार के पांव में मालिश करते देखकर निश्चिन्त रहे। दोपहर के तीन बजे हीराजी फर्जन्द अपने नौकर के साथ बाहर निकल गया और जाते हुए द्वार-रक्षकों से कह गया कि देखो शिवाजी बीमार हैं, शोर मत मचाओ, उन्हें आराम से चुपचाप सोने दो।

कुछ समय के बाद पहरेदारों ने उस स्थान पर सुनसान सन्नाटा अनुभव किया। अब लोगों का आना-जाना बिलकुल बन्द हो गया था। उन्हें कुछ-कुछ संदेह होने लगा। वे शिवाजी के स्थान पर गए और उनके बिस्तर को देखा तो वहां कोई न था। देखकर हैरान और स्तम्भित हो गए। पक्षी उड़ गया। हाथ में आया हुआ शत्रु आंखों में धूल झोंककर उड़ गया। एकदम कैदखाने के बड़े अफसर फुलादखां को इत्तला दी गई। उसने तत्काल औरंगज़ेब को शिवाजी के जादू का प्रयोग कर वहां से निकल जाने की खबर पहुंचाई। उसने कहा, "हम उन्हें लगातार देखते रहे, पता नहीं कब जादू के चमत्कार से वे आकाश में उड़ गए, या भूमि में छिप गए।" औरंगज़ेब इन बातों से सन्तुष्ट नहीं हुआ। उसने एकदम अपने गुप्तचर पीछा करने के लिए दौड़ाए। जहां जो मराठा दिखाई दिया उसे गिरफ्तार करने का हुक्म दिया गया। इतने में शिवाजी को एक दिन का समय मिल गया था। वे कहीं से कहीं निकल गए। आगरा से दक्खिन तक सब मुगलाई थानों और शहरों में गुप्तचरों का जाल बिछा दिया गया। किन्तु अब शिवाजी को पकड़ना मुश्किल ही नहीं, असम्भव हो गया। औरंगज़ेब दांत पीसता रह गया। उठते हुए विद्रोही को तलवार चलाए बिना, रक्तपात किए बिना, नष्ट कर देने का मनसूबा काफूर हो गया। बेबसी और गुस्से के आवेश में शिवाजी के निकल जाने की जिम्मेदारी जयसिंह के बेटे रामसिंह पर डाली गई। उसे पदच्युत कर ... गया। उसका दरबार में आना बन्द कर दिया गया। इस

समाचार से राजा जयसिंह को बहुत ठेस पहुंची। अपने पुत्र के इस अपमान को देखकर वह निराश हो गया। शिवाजी और औरंगज़ेब दोनों को कोसने लगा। अपने जाति-भाइयों को अपनी महत्त्वाकांक्षा के लिए बलि करनेवालों के साथ ऐसा ही होता है। जयसिंह इस चिन्ता में परेशान रहने लगा और दक्खिन से उत्तर भारत को रवाना हुआ। उधर शिवाजी दक्खिन मे सुरक्षित पहुंच गए। जयसिंह रास्ते में ही बीमार होकर यमलोक का यात्री बना।

यदि तुम स्वयं स्वतन्त्र नहीं रह सकते, स्वयं अत्याचारी को ललकार नहीं सकते, तो कम से कम स्वतन्त्रों को पराधीन बनानेवाले मत बनो। यदि ऐसा करोगे तो स्वतन्त्रतादेवी के शाप के कारण, जीते-जी कराहते हुए सब तरफ से निराश होकर नारकीय मौत के यात्री बनोगे।

शिवाजी अनेक वेशों में

शिवाजी ने मुगल गुप्तचरों की आंख से बचने के लिए महाराष्ट्र जाने के प्रसिद्ध मार्ग—मालवा, खानदेश, गुजरात का रास्ता छोड़कर, मथुरा, इलाहाबाद, बनारस, गया और पुरी की ओर प्रस्थान किया। वहां से गोंडवाना और गोलकुण्डा होते हुए, भारतवर्ष की प्रदक्षिणा करते हुए रायगढ़ में पहुंचे।

मथुरा पहुंचकर शिवाजी ने अनुभव किया कि शंभाजी के साथ यह साहसपूर्ण संकटाकीर्ण यात्रा निर्विघ्न समाप्त न हो सकेगी। मथुरा के तीन दक्षिणी ब्राह्मणों कृष्णाजी, काशी और बिसाजी ने अपने-आपको खतरे में डालकर, राष्ट्रीयता के नाम पर शम्भाजी को शिवाजी के महाराष्ट्र पहुंचने तक अपने साथ रखना स्वीकार किया। यही नहीं, कृष्णाजी ने शिवाजी को बनारस तक सुरक्षित पहुंचाने के लिए पथप्रदर्शक बनना भी स्वीकार किया।

शिवाजी ने संन्यासियोंवाले, अन्दर से खोखले, दण्ड में जवाह-

रात और स्वर्णमुद्राएं भर ली। कुछ रुपया अपनी जूतियों में छिपाकर रख लिया। साथ जानेवाले विश्वस्त नौकरों के पहने कपड़ों में और उनके मुखों में कीमती हीरे-जवाहरात छिपा दिए। आगरा से मथुरा तक शिवाजी छः घंटों में पहुंचे। वहां पहुंचकर उन्होंने दाढ़ी-मूंछ साफ कराई। देह पर भस्म रमाई। संन्यासियों के कपड़े पहने। दक्खनी बहुरूपिये हरकारों के साथ भिन्न-भिन्न रूपों में शिवाजी रात को यात्रा करते थे। शिवाजी के साथ पचास नौकर थे। इनकी तीन टोलियां बनी। इन लोगों ने वैरागियों, उदासियों और गोसाइयों के वेश धारण किए।

शिवाजी अपने साथियों के साथ लगातार अपना वेश बदलते हुए यात्रा करने लगे। कभी व्यापारियों का बाना पहनते, तो कभी भिखारियों का वेश। किसीको भी आशा नहीं थी कि वे पूर्वीय प्रदेशों से यात्रा करेंगे—उनका सीधा रास्ता पश्चिमीय प्रदेशों से था। फिर भी मुगल-दरबार के औरंगज़ेब जैसे सूक्ष्मदर्शी बादशाह के भारत के कोने-कोने में फैले हुए गुप्तचर-विभाग की आंखों से बचकर निकलना मुश्किल था।

एक शहर में मुगल-दरबार के एक अफसर अलीकुली ने सन्देह होने पर उन सबको गिरफ्तार कर लिया। उसे सरकारी तौर से तो नहीं, परन्तु आगरा में रहनेवाले एक मित्र के पत्र से पता लगा था कि शिवाजी वहां से भाग निकले हैं। उसने उन सबकी तलाशी लेनी शुरू की। शिवाजी उससे घबराए नहीं। उन्होंने सावधानी से काम लिया। आधी रात को एकान्त में फौजदार अलीकुली को जगाया और उसके सामने अपना असली रूप प्रकट कर उसे हीरे-जवाहरात देकर चुप होने की प्रेरणा की। फौजदार ने भेंट स्वीकार कर ली [illegible] को वहां से आगे जाने दिया। अत्याचारी बादशाहों [illegible] इसी प्रकार के लालची अफसरों के कारनामों से खोखले हो [illegible]।

जिस शासन में इस प्रकार की रिश्वत लेने की प्रथा चल जाए सके अन्तिम दिन निकट समझने चाहिए। साधारण जनता की इच्छा प्रतिकूल तलवार के बल पर चलनेवाले शासकों की जड़ों को ऐसे श्वतखोर लालची अधिकारी ही खोखला तथा छिन्नमूल करते हैं।

इलाहाबाद में गंगा-यमुना के संगम पर स्नान करने के बाद शिवाजी बनारस पहुंचे। यहां पर शिवाजी ने प्रभातकाल के धुंधले पाकाल में तीर्थयात्री के कर्तव्य तथा पूजा-कीर्तन किए और उसी मय शहर में आगरा से आए हुए एक हरकारे द्वारा बादशाह की गेर से शिवाजी को गिरफ्तार करने की घोषणा के होते-होते, शिवाजी अंधेरे-अंधेरे में बनारस से आगे निकल गए।

इस विषय में खाफीखान ने निम्नलिखित घटना का वर्णन किया है—

"मैं जब सूरत में रहता था तो एक ब्राह्मण वैद्य ने मुझे निम्नलिखित घटना सुनाई थी :

" 'मैं बनारस में एक ब्राह्मण के पास शिष्य के रूप में रहता था। एक बार प्रातःकाल अंधेरे में, मैं नियमानुसार गंगातट पर गया। वहां एक आदमी ने ज़बर्दस्ती मेरा हाथ खींचा। उसने हीरे-जवाहरात और सुनहरी सिक्के रखते हुए कहा—'इसे खोलो मत, भेंट ले लो और जल्दी-जल्दी स्नान-पूजापाठ की विधि करो।' मैं जल्दी में उसका क्षौर कर उसे स्नान कराने लगा, अभी स्नान समाप्त भी नहीं हुआ था कि एकदम शोरगुल मच गया कि आगरा से मुगल-दरबार का हरकारा शिवाजी की तलाश में आया है। मैं अभी स्नान कराने तथा अन्य संस्कार कराने के लिए सावधान हुआ ही था कि क्या देखता हूं, कि यात्री वहां से खिसक गया है। तब मैंने समझा कि वह व्यक्ति शिवाजी था। शिवाजी ने मुझे नौ हीरे, नौ अशर्फियां, नौ हुन दिए थे। मैं अपने गुरु के पास नहीं गया, सीधा सूरत आ गया। यह मकान जिसमें मैं रहता हूं, उसी धन से खरीदा

हुआ है।' "

यहां से शिवाजी जगन्नाथपुरी पहुंचे। अभी तक लम्बी यात्रा पैदल ही होती थी। पुरी में शिवाजी ने घुड़सवारी करने की इच्छा प्रकट की। यहां उन्होंने घोड़ों के व्यापारी से घोड़ा खरीदना चाहा। परन्तु उनके पास रुपये न थे। उन्होंने उस व्यापारी को रुपये के स्थान पर सोने की मुहरें देकर घोड़ा खरीदना चाहा। इस समय तक वहां भी शिवाजी के आगरा से भाग जाने की खबर पहुंच गई थी। उस व्यापारी ने रुपये के बदले सोने की मुहरें देखकर कहा कि तुम शिवाजी हो क्योंकि तुम छोटे-से घोड़े के लिए सुनहरी मुहरें दे रहे हो। शिवाजी ने उसको सोने की मुहरोंवाली थैली देकर चुप कराया और स्वयं वहां से तत्काल आगे विदा हुए। तत्पश्चात् जगन्नाथपुरी में स्नान-पूजा करके शिवाजी गोंडवाना, हैदराबाद और बीजापुर के प्रदेशों में यात्रा करते हुए अपने घर वापस रायगढ़ पहुंचे।

इस साहसपूर्ण यात्रा के सम्बन्ध में निम्नलिखित दन्तकथा भी सुनी जाती है। गोदावरी नदी के तट पर एक गांव में एक किसान के घर में इन संन्यासियों ने आश्रय लिया। यजमान की वृद्धा माता ने संन्यासियों के सामने नाममात्र की, अल्प मात्रा में भेंट उपस्थित की और कहा कि शिवाजी के लुटेरे सिपाहियों ने अभी इस गांव को लूटकर उजाड़ दिया है। उसने उन सिपाहियों तथा शिवाजी को दिल भरके शाप तथा अपशब्द सुनाए। शिवाजी ने उस किसान का नाम तथा गांव का नाम अंकित किया और घर जाने पर उस परिवार को वहां बुलाकर उनको दिल खोलकर इनाम दिया, उनकी लुटी हुई सम्पत्ति से ज्यादा उन्हें दी।

शिवाजी के महाराष्ट्र में [illegible] लौटने पर राष्ट्र ने आनन्दोत्सव मनाए। जनता उन्हें अने[illegible] और चमत्कारी पुरुष मानने लगी।

[illegible] अभी मथुरा में [illegible] शिवाजी ने राष्ट्र में यह समाचार

फैलाया कि शम्भाजी मर गया है। इसके लिए सार्वजनिक शोक भी किया गया। यह सब इसलिए किया गया ताकि मुगल गुप्तचर उसकी तलाश में न लगें। कुछ समय बाद शिवाजी ने मथुरा से मराठा ब्राह्मण साथियों के साथ उसे दक्षिण में बुला लिया। कहा जाता है कि एक बार मुगल गुप्तचरों को शम्भाजी और उनके साथियों पर संदेह हो गया। उस समय ब्राह्मणों ने भी शम्भाजी के साथ बैठकर भोजन किया। इससे उन्होंने शम्भाजी को भी ब्राह्मण समझा और उनका संशय दूर हो गया। शिवाजी ने शम्भाजी के लौटने पर उनको सुरक्षित पहुंचानेवाले साथियों का सम्मान किया और उन्हें भेंट-पुरस्कार दिए। शिवाजी तथा उनके पुत्र के लिए अपने-आपको मुसीबत में डालनेवालों को भी पर्याप्त दान-राशि तथा जागीरें दी गईं।

शिवाजी के इस प्रकार आगरा से बच निकलने पर औरंगजेब को बहुत अफसोस हुआ। वह जीवन-भर इसके लिए पछताता रहा। अपनी अन्तिम वसीयत और मृत्युपत्र में औरंगजेब ने इस विषय में इस प्रकार से भाव प्रकट किए—

"किसी भी सरकार (शासनचक्र) को स्थिर पांव पर खड़ा करने का मुख्य साधन, राज्याधिकारियों का उस राष्ट्र में होनेवाली सूक्ष्म घटनाओं का पता रखना है। ऐसा न होने पर एक क्षण की लापरवाही तथा असावधानी कई बार चिरकाल के लिए लज्जा तथा शोकजनक परिणामों को पैदा करती है। देखो! इसी प्रकार की असावधानी और लापरवाही के कारण शिवाजी आगरा से निकल भागे। और इस भूल के कारण मुझे जीवन के अन्तिम दिनों में परेशान करनेवाली लड़ाइयों में उलझना पड़ा।"

१६६६ ई० में शिवाजी के दक्षिण वापस आने की खबर सर्वत्र प्रमाणित रूप में फैल गई। इस समाचार को सुनते ही शिवाजी के सिपाही तथा अनुयायी स्थान-स्थान पर मुगल-सेनाओं के विरुद्ध

विद्रोह करने लगे। जयसिंह का प्रभाव तथा नियन्त्रण शिथिल और क्षीण होने लगा। उसने फिर से शिवाजी को अपने चंगुल में फंसाने के लिए अपने पुत्र का शिवाजी की कन्या के साथ विवाह करने का प्रस्ताव-जाल भी बिछाना चाहा। इसके लिए मुगल-दरबार के प्रधानमन्त्री जाफरखान से पत्र-व्यवहार भी किया। परन्तु अब शिवाजी इस जाल में नहीं फंस सकते थे। इस निराशा और पराजय से जयसिंह खिन्न हो गया। बीजापुर के अधीन प्रदेशों पर किए गए आक्रमणों में भी उसे पराजित होना पड़ा और बुढ़ापा भी सिर पर आ पहुंचा। शिवाजी के आगरा में जयसिंह के निवास-स्थान से निकल आने के कारण औरंगजेब के हृदय में उसके लिए अविश्वास का भाव पैदा हो गया था। अपने पुत्र रामसिंह को मुगल-दरबार में अपमानित होता देख वह बहुत दुःखी हुआ। १६६७ की मई में औरंगजेब ने राजकुमार मुअज्जम को दक्षिण का शासक नियत करके भेजा। जयसिंह उसे कार्य-भार सौंपकर उत्तरभारत को रवाना हुआ। रास्ते में २ जुलाई, १६६७ को बरहानपुर में चिन्ता और निराशा से खिन्न जयसिंह परलोक को सिधारा।

अपमान का प्रतिकार

दक्षिण वापस आकर शिवाजी ने सबसे प्रथम यह आवश्यक समझा कि इस समय बिखरी हुई, अपनी अनुपस्थिति में शिथिल तथा मन्द पड़ी हुई अपनी शक्ति को गतिशील और सगठित करें। इसके लिए आवश्यक था कि वे कुछ समय तक रणांगन की चहल-पहल से अलग रहें। संभावना यह थी कि औरंगजेब अपने दल-बल के साथ शिवाजी का दमन करने के लिए स्वयं महाराष्ट्र में आएगा। परन्तु उत्तरभारत में विद्रोहियों को दबाने में उसे अपनी शक्ति को लगाना पड़ा। अपने दरबार में भी उसका उपस्थित रहना आवश्यक था। शिवाजी ने भी औरंगजेब को इधर आने से रोकने के लिए उसके साथ स्वयं तथा मुअज्जम द्वारा सन्धि-चर्चा शुरू कर दी।

घटना-संयोग से दक्खिन में मुगल-दरबार का नया शासक राजकुमार मुअज्जम स्वभाव से आरामपसन्द था। उसकी सहायता के लिए महाराजा जसवंतसिंह को भेजा गया था। वह भी यथासम्भव लड़ाइयों से पृथक् रहना चाहता था। शिवाजी ने इन दोनों के मध्यस्थ होने का फायदा उठाकर औरंगजेब के साथ संधि-चर्चा शुरू कर दी। अपने पुत्र शम्भाजी तथा अपनी सेना की टुकड़ी को मुगल-दरबार में भेजना स्वीकार कर लिया। औरंगजेब ने भी उत्तरभारत के विद्रोह को दबाने के लिए दक्षिण में शान्ति की नीति स्वीकार कर ली। परन्तु दक्खिन के विद्रोहियों तथा प्रतिद्वन्द्वियों पर आंख रखने, और राजकुमार मुअज्जम और जसवन्तसिंह पर निगरानी रखने के लिए अपने विश्वासपात्र और अनुभवी सरदार दिलेरखान

को भारी सेना के साथ दक्खिन भेजा। उसकी सहायता के लिए दाऊदखान भी साथ था। मुअज्जम तथा जसवन्तसिंह दिलेरखान के प्रभाव को कम करना चाहते थे। दिलेरखान सीधा मुगल-दरबार का प्रतिनिधि बनकर उन्हें शिवाजी के साथ मिलने नहीं देना चाहता था। परिणाम यह हुआ कि राजकुमार मुअज्जम और दिलेरखान में अनबन हो गई। दक्खिन के मुगल-कर्मचारी आपस में ईर्ष्या-द्वेष की ज्वाला में झुलस गए। शिवाजी ने इस परिस्थिति से लाभ उठाया। मौका देखकर पुरन्दर की अपमानजनक संधि को नष्ट-भ्रष्ट करने का निश्चय किया। इस संधि के कारण शिवाजी को अपने तेईस पहाड़ी किले जयसिंह के द्वारा दरबार के अधीन करने पड़े थे। मुअज्जम और जसवन्तसिंह की शान्तिप्रिय नीति के कारण शिवाजी ने धीरे-धीरे कई किले वापस ले लिए। परन्तु रायगढ़ से दीखनेवाले, शिवाजी की बाल-लीलाओं के क्रीड़ा-स्थान—कोंडाणा किले पर फहराती हुई मुगल-पताका, राजमाता जीजाबाई के हृदय में वेदना और अपमान की ज्वाला को सुलगाती थी। उसका पुत्र आगरा से सुरक्षित वापस आ गया था। पुरन्दर-संधि की अपमानजनक कड़ियां भी छिन्न-भिन्न हो गई थीं, परन्तु कोंडाणा किले पर फहराती हुई मुगलों की पताका महाराष्ट्रीय स्वाधीनता को हर समय चुनौती दे रही थी। जीजाबाई ने इस किले पर अपना झंडा लहराने की इच्छा प्रकट की। माता की इच्छा के सामने शिवाजी ने सिर झुकाया। कोंडाणा किले को जीतने की तैयारियां होने लगीं।

सिंहों का रोमांचकारी युद्ध

कोंडाणा किले का महत्त्व समझते हुए, औरंगज़ेब ने राजपूत वीर उदयभान को इस किले का रक्षक नियत किया था। वीर राजपूत, वीरता की आन-शान में अपना सर्वस्व लुटा देगा परन्तु रणांगन से पीछे न हटेगा। राजपूत वीरता से डटे रहने को अन्तिम लक्ष्य सम-

भते थे। उनके लिए यही अन्तिम उद्देश्य था। किसकी ओर से लड़ रहे हैं, किससे लड़ रहे हैं, आपस में लड़ रहे हैं या पराये से, या भाई-भाई से—इसकी उन्हें कोई चिन्ता नहीं; उनके लिए तो पीछे हटना मृत्यु है। इसी मनोवृत्ति के कारण विदेशियों ने, "शाबाश राजपूत शेर" की थपक देकर, मानसिंह को प्रताप से लड़ाया, प्रताप को सहोदर शक्तिसिंह से लड़ाया, जयचन्द को पृथ्वीराज से लड़ाया। औरंगजेब ने भी जसवन्त को जयसिंह का प्रतिस्पर्धी बनाया और अनेक राजपूतों को मराठों के मुकाबले में वीरता के नाम पर लड़ाया। कोंडाणा में भी शिवाजी के सेनापतियों के मुकाबले में 'उदयभान' को इसलिए तैनात किया क्योंकि उसे पता था कि उसके मुगल-सिपाही तो चोट लगते ही वीरता की आन बचाने से पहले, अपने शरीर, अपने प्राण को बचाएंगे। प्रत्यक्षवादी मुगल वीरता, शूरता, चतुरता सबको आत्मरक्षा का साधन समझते हैं।

राजपूत उदयभान अपने मोर्चे पर खड़ा है। शिवाजी का बाल-सखा तानाजी मालसरे, माता जीजाबाई के आदेश पर पुत्र के विवाह-समारोह को छोड़कर, भवानी-अर्चना के लिए, कोंडाणा की ओर बढ़ा। किला दुर्गम, अजेय तथा सुरक्षित था। परन्तु शिवाजी के बालसखा के लिए महाराष्ट्र की भूमि पर कोई स्थान अगम्य और अजेय नहीं। तानाजी मालसरे ने तीन सौ चुने हुए मावलिये सरदार अपने साथ लिए। एक अंधेरी रात को, उस स्थान के रहनेवाले कुछ कोली पथ-प्रदर्शकों के साथ कल्याण द्वार के पास एक पहाड़ी पर, रस्सी की सीढ़ियों से चढ़ गया। वहां से पहरेदारों को मारता हुआ तानाजी किले की ओर बढ़ा। किले के आदमियों ने खतरे का बिगुल बजा दिया। अफीम के नशे में चूर राजपूतों को शस्त्र बांधकर बाहर आने में कुछ समय लगा—इतने में मराठे वीर सिपाही अपना पैर जमा चुके थे। किले के संरक्षक सिपाही प्राणों को हथेली पर रखकर लड़े। परन्तु मावले वीरों के 'हर-हर महादेव' के नारे ने

राजपूत सिपाहियों में भय और आतंक की चिनगारियां बखेर दीं। तानाजी मालसरे और उदयभान दोनों एक-दूसरे के आमने-सामने आए। दोनों ने एक-दूसरे को ललकारा। दोनों की तलवारें चमचमाने लगीं। दोनों की टक्कर से आंखों को चौंधियानेवाली चिंगारियां निकलने लगी। कोई पीछे नहीं हटा। घमासान युद्ध हुआ। सुन्द-उपसुन्द की भांति वीरता और विजयलक्ष्मी का आलिंगन करने के लिए दोनों में घमासान युद्ध हुआ। लड़ते-लड़ते दोनों धराशायी हुए। तानाजी मालसरे के धराशायी होते ही, मराठा वीर हतोत्साह होने लगे थे, इतने में उनका भाई सूर्याजी मालसरे आगे बढ़ा। उसने भवानी की तलवार को संभाला, वीरों को उत्साहित तथा उत्तेजित किया। किले के अन्दर राजपूत सिपाहियों को तलवार का यात्री बनाकर किले के बाहर एकत्र मावले वीरों को अन्दर आने के लिए किले के कल्याण-द्वार के फाटक खोल दिए। मुख्य द्वार के खुलते ही किले पर मराठे वीरों का पूर्ण अधिकार हो गया। इसके बाद मार-काट शुरू हुई। बारह सौ राजपूत तलवार की धार पर उतारे गए। अनेकों किले से बाहर निकलने की कोशिश में पहाड़ियों से बचकर निकलने की उलझन में मर मिटे। विजेता मराठों ने घुड़सवारों की झोंपड़ियों में आग लगाकर, जलती हुई ज्वाला की लपटों से, वहां से नौ मील दूर रायगढ़ किले में शिवाजी को किला जीत लेने की सूचना दी। शिवाजी को किला जीतने की खबर के साथ-साथ तानाजी मालसरे की मृत्यु का शोकजनक समाचार भी मिला। उन्होंने मर्मान्तिक हार्दिक वेदना में "गढ़ आया, पर सिंह गया" के हृदयोद्गार के साथ उस किले का नाम सिंहगढ़ रखा। तलवार के धनी दो वीर योद्धाओं के रक्त से सिंचित किले को सिंहगढ़ के सिवाय और किस नाम से स्मरण किया जाता! शिवाजी वीर थे और [illegible] पूजा करना जानते थे। उन्होंने किले का नाम 'सिंहगढ़' [illegible]। साथी तानाजी का नाम वीरता के इतिहास में अमर

कर दिया।

तीन महीने के बाद, मार्च में पुरन्दर का किला भी, अजीजुद्दीन खान किलेदार के गिरफ्तार होने पर, मराठों के हाथ में आ गया। १६७० ई०, अप्रैल तक शिवाजी ने माहुली आदि अनेक किले अपने अधीन कर लिए। मुगल सेनापति दाऊदखान ने शिवाजी को इन स्थानों पर रोकने की कोशिश की। परन्तु देर तक वह भी मुकाबला न कर सका। दक्खिन मे सेनापतियों में परस्पर कलह शुरू हो गई थी। शाहज़ादे मुअज्ज़म और दिल्लेरखान में अनबन बढ़ती गई थी। औरंगज़ेब ने इनको दूर करने की कोशिश की, परन्तु सफल न हो सका। शिवाजी ने दक्खिन के मुगल-सेनापतियो की अन्तःकलह से खूब लाभ उठाया। औरंगज़ेब को अपने पुत्र मुअज्ज़म पर भी संदेह पैदा हो गया था। औरंगज़ेब की शक्ति भी दिन-प्रतिदिन वृद्धावस्था के साथ कम हो रही थी। शाहज़ादा मुअज्ज़म जसवन्त के साथ मिलकर उत्तरभारत को आ रहा था। औरंगज़ेब ने १६७० ई० में उसको एकदम औरंगाबाद वापस बुला भेजा।

इस समय शिवाजी की शक्ति और प्रभुत्व दिन-प्रतिदिन बढ़ रहे थे। वह औरंगज़ेब के प्रभाव को मटियामेट कर रहा था। जनता उसके प्रभाव के सामने सिर झुका रही थी। पुरन्दर की सन्धि छिन्न-भिन्न हो गई थी। १६७० ई०, मार्च महीने में सूरत में रहनेवाले अंग्रेज़ी कोठी के व्यापारियों ने अपने मालिकों को निम्नलिखित संदेश भेजा था—

'शिवाजी अब चोरों की भांति मारधाड़ नहीं करता। अब उसके पास तीस हज़ार सिपाहियों की सेना है। वह जिधर बढ़ता है, उधर ही मैदान जीत लेता है। मुगलों के सेनापति तथा मुगलाई शाहज़ादे उसकी गति को रोक नहीं सकते।'

युद्धों के कारण राजकोष खाली हो रहा था। औरंगज़ेब 'जज़िया' कर द्वारा अपने राजकोष को भर रहा था। शिवाजी ने १६७० ई०

के अक्तूबर मास में सूरत पर दूसरी बार हमला किया। डच तथा अंग्रेज व्यापारियों ने आत्मरक्षा में हथियार उठाए। मुगल अफसर शिवाजी को रोक न सके। शिवाजी ने विजली के समान चमककर छिपने और प्रकट होनेवाले अपने सिपाहियों की सहायता से सूरत को लूटा! खूब लूटा!! सरकारी बयान के अनुसार शिवाजी ने छियासठ लाख रुपये की सम्पत्ति सूरत से लूटी, जिसमें से पचपन लाख की सम्पत्ति सूरत शहर से और तेरह लाख की सम्पत्ति नवलसाहू और हरिसाहू नाम के व्यापारियों से छीनी। शिवाजी के आक्रमणों तथा संभावित आक्रमणों की अफवाहों ने सूरत के व्यापार को बिलकुल तहस-नहस कर दिया। व्यापारी लोग वहां आने से घबराने लगे। शाहज़ादा मुअज़्ज़म ने सूरत की लूट का बदला लेने की कोशिश की। कई स्थानों पर शिवाजी पर हमला करने की योजना की, परन्तु उनकी गति को वह भी न रोक सका। शिवाजी की विजय-यात्राओं की धूम सारे देश में मच गई। भारतवर्ष के विविध प्रान्तों के मुगल-अत्याचारों तथा औरंगज़ेबी शासन-नीति से खिन्न, वीर पुरुष शिवाजी के चारों ओर एकत्र होने लगे।

छत्रसाल और शिवाजी

१६७०—१६७१ ई० में महोबा के राजा चम्पतराय बुन्देल का पुत्र छत्रसाल शिवाजी के पास दक्खिन में आया। मिर्ज़ा जयसिंह ने इस नवयुवक को शाही सेना में भर्ती कर लिया और गोंड प्रदेश पर इसने मुगल-सेना के साथ आक्रमण किया। परन्तु औरंगज़ेब की अनुदार नीति के कारण इसे असन्तुष्ट और अपमानित होना पड़ा। छत्रसाल मौका देखकर अपनी धर्मपत्नी के साथ, शिकार करने के निमित्त से शाही सेना से अलग होकर निकल भागा और दक्खिन में शिवाजी की स्वतन्त्र सेना में भर्ती होने के लिए पहुंचा। शिवाजी ने सम्मानपूर्वक अभिवादन किया और उसकी वीरता की प्रशंसा

की। शिवाजी ने छत्रसाल को बुन्देलखण्ड में औरंगजेब के विरुद्ध विद्रोह करने के लिए वापस भेजा और निम्नलिखित परामर्श दिया—

'सम्मान-योग्य वीरश्रेष्ठ ! अपने शत्रुओं को जीतो और उनका दमन करो। अपनी मातृभूमि को शत्रुओं से छीनकर स्वयं उसपर राज करो। उचित यही है कि तुम अपने अधीन प्रदेशों में औरंगजेब के विरुद्ध लड़ाई जारी रखो। तुम्हारी वीरता और स्वाधीनता की तड़प तुम्हारे चारों ओर वीर पुरुषों को इकट्ठा कर देगी। जब कभी मुगल-सेनाएं या मुगल-दरबार तुम्हारे प्रदेश पर आक्रमण करने का इरादा करेंगे, तो मैं तुम्हें पूर्ण सहयोग दूंगा। उनको तुम्हारी ओर जाने से रोकूंगा और उनका ध्यान दूसरी तरफ खींचने में, उन्हें दूसरे रणक्षेत्र में व्यग्र रखने में, कसर न करूंगा।'

छत्रसाल इस वीर-सन्देश को लेकर बुन्देलखण्ड वापस आया और उसने शिवाजी के परामर्श के अनुसार बुन्देलखण्ड में मुगलों के विरुद्ध विद्रोह का झंडा खड़ा करके औरंगजेब की शाहंशाही के रोबदाब को मटियामेट करने में कोई बात शेष न रखी। इस प्रकार शिवाजी धीरे-धीरे भारतीय राष्ट्र के स्वाधीनता-प्रेमी वीरों का पूजनीय केन्द्र-स्थान बन गए। राष्ट्र के वीर शिवाजी को औरंगजेब की टक्कर का प्रतिद्वन्द्वी समझकर उनके चारों ओर इकट्ठे होने लगे।

१६७१–१६७२ ई० में शिवाजी ने लगातार लड़ाइयां करके बगनाला और कोली प्रदेश, कोंकण के जौहर और रामनगर अपने अधीन कर लिए। १६७३ ई० में पन्हाला के प्रदेश पर और १६७४ में कोल्हापुर और पोंडा पर शिवाजी का पूर्ण अधिकार हो गया। इस प्रकार १६७५ ई० में शिवाजी की राज्य-सीमा पश्चिमी कर्नाटक तक पहुंच गई।

शिवाजी का राज्याभिषेक-समारोह

विक्रमार्जितराज्यस्य स्वयमेव नरेन्द्रता ।[1]

क्षतात् किल त्रायत इत्युदग्रः क्षत्रस्य शब्दो भुवनेषु रूढः ।[2]

पराक्रम द्वारा राज्य स्थापित करनेवाला व्यक्ति अभिषेक और संस्कार की अपेक्षा नहीं रखता, जनता स्वयं ही उसे राजा की तरह पूजने लगती है। जनता शिवाजी को अन्यायी शासकों के अत्याचार तथा अन्याय की रक्षा करनेवाले राजा के रूप में पूजती थी। यद्यपि शिवाजी जन्म से मराठा थे और उस समय के रूढ़िवादी जन्मगत श्रेणी-भेदों को माननेवाले थे जो उन्हें द्विज तक मानने को तैयार न थे, परन्तु शिवाजी ने राष्ट्र को, गौ और ब्राह्मण को अत्याचारियों की तलवार से बचाकर अपने-आपको सच्चा क्षत्रिय प्रमाणित किया। उनके इस गुणोत्कर्ष को देखकर, उनकी इस चमत्कारी आकर्षण-शक्ति और तेज को देखकर, स्वयं जनता उन्हें क्षत्रपति—छत्रपति—के रूप में पूजने लगी। उस समय की जागरित जनता की धार्मिक उमंगों का मान करते हुए शिवाजी ने नियमपूर्वक राज्याभिषेक-संस्कार कराना निश्चित किया। गागाभट्ट ब्राह्मण ने शिवाजी को मन्त्र दिया और यज्ञोपवीत धारण कराकर गुणकर्मानुसार क्षत्रिय बनाकर अभिषिक्त राजा होने का अधिकारी घोषित किया। चिरकाल की

---

१. पराक्रम से प्रदेश जीतनेवाला स्वयंसिद्ध राजा है।

२. [illegible]

रूढ़ प्रथाओं और भोगवाद के कारण जीर्ण-शीर्ण क्षत्रिय जाति के गुणहीन और निश्चेष्ट होने पर आर्य जाति के संचालक समय-समय पर नये-नये वीर पुरुषों को क्षत्रिय-धर्म में दीक्षित कर नये क्षत्रियों की सृष्टि करते रहे हैं।

आठवीं-नवीं शताब्दी में आबू पर्वत पर इसी प्रकार के नये क्षत्रिय सजाए गए थे। इन वंशों ने चिरकाल तक भारतवर्ष को विदेशियों के आक्रमणों तथा अत्याचारों से सुरक्षित रखा। उत्तर-भारत में, पञ्चनद प्रान्त में, गुरु गोविन्दसिंह ने, पाहुल और चण्डी-देवी का यज्ञ रचाकर इसी प्रकार के क्षत्रिय रचाए थे। इधर गुरु रामदास की आध्यात्मिक छत्र-च्छाया में गागाभट्ट ने शिवाजी को क्षात्र-धर्म में दीक्षित किया। क्षात्र-धर्म में दीक्षित होते समय सुवर्ण छत्र आदि के तुलादान किए गए।

६ जून का दिन राज्याभिषेक के लिए नियत किया गया। ५ जून का दिन *संयम, उपवास, व्रत में बिताया गया।*

भारत की गंगा आदि पवित्र नदियों के तीर्थजल से शिवाजी ने स्नान किया। गागाभट्ट को पांच हज़ार हून दान दिए गए। उपस्थित ब्राह्मणों को सौ-सौ सुनहरी मुहरें दी गईं। १६७४ ई०, ६ जून को राज्याभिषेक का समारोह प्रारम्भ किया गया। शिवाजी ने प्रभात-वेला में स्नान किया। कुल के इष्ट-देवता की अर्चना की। कुल-पुरोहित गागाभट्ट की चरण-वन्दना की। पवित्र शुभ्र भेष के साथ सुगन्धित पुष्प-मालाएं धारण कीं। अभिषेक के लिए नियत स्थान पर शिवाजी उपस्थित हुए। इस स्थान पर दो फुट ऊंचे, दो फुट चौड़े सुनहरे पत्रों से जटित आसन पर शिवाजी आसीन हुए। महारानी सोयराबाई, शिवाजी के बाईं ओर बैठीं [illegible] का उत्तरीय वस्त्र शिवाजी के उत्तरीय वस्त्र के [illegible] भूषित किया गया कि [illegible] इस लोक तथा परलोक [illegible] की

उत्तराधिकारी के रूप में दोनों के पीछे बिठाया गया। तदनन्तर अष्ट-प्रधान-मंडल के आठों मंत्रियों ने, गंगाजल से परिपूर्ण आठ सुवर्ण-कलशों के पवित्र तीर्थजलों को शिवाजी, सोमराबाई और शम्भाजी के शीर्षभागों पर छिड़ककर उनका अभिषेक किया। इसी समय गाजे-बाजे के साथ मंत्र-उच्चारण किया गया। सोलह पवित्र, शुद्ध वस्त्र धारण करनेवाली ब्राह्मण महिलाओं ने सुवर्ण-निर्मित स्थाली में रखी हुई पंच-प्रज्वलित-दीपावली से शिवाजी की आरती उतारी।

इसके बाद शिवाजी ने अपना वेश-परिधान बदला। सुवर्णजटित, जगमगाते हीरे-मोतियों तथा स्वर्णाभरणों से सज्जित राजकीय वेश धारण किया। गले का हार, पुष्पों की माला, हीरे-मोतियों की लड़ियों से सज्जित पगड़ी धारण की। तलवार, ढाल, धनुष-बाण की पूजा की। तदनन्तर पूजनीय वृद्धजनों और ब्राह्मणों को शिरोनत होकर नमस्कार किया। शुभ मुहूर्त में सिंहासन-भवन में प्रवेश किया। सिंहासन-भवन अनेक प्रकार की चित्रकारी से अलंकृत था। सिंहासन के ऊपर हीरे-मोतियों की लटकती हुई लड़ियों में ओतप्रोत सुवर्ण वस्त्र लहरा रहा था। भूमि-भाग कीमती कालीनों से सजाया गया था। सिंहासन-भवन के ठीक मध्य में कई महीनों के निरन्तर यत्न से निर्मित महती रत्न-मणियों से जड़ा हुआ सिंहासन भी रखा गया।

सिंहासन की आसन-पीठ सुवर्ण शलाकाओं से मढ़ी हुई थी। आठों दिशाओं में खड़े आठों स्तम्भ हीरे-जवाहरात से जड़े हुए थे। इन आठों खम्भों पर कीमती सुवर्ण चित्रकारी से अलंकृत चांदनी लहरा रही थी। चांदनी की सुवर्ण-चित्रकारी से हीरे-मोतियों की मालाएं जगमगाते रत्नों की आभा से प्रदीप्त होकर चमचमा रही थीं। राजसिंहासन पर सिंह-चर्म के ऊपर मखमल सजा हुआ था। सिंहासन के दोनों ओर अनेक प्रकार के राज-चिह्न और शासन-चिह्न सजाए गए थे।

ज्योंही शिवाजी सिंहासन पर ग्रारूढ़ हुए, उपस्थित जनता पर ग्रनेक प्रकार के सुवर्ण-रजत-निर्मित पुष्पों की वृष्टि की गई। तत्काल सोलह विवाहित ब्राह्मण-देवियों ने नवाभिषिक्त राजा की ग्रारती उतारी। ब्राह्मणों ने मन्त्र-पाठ के साथ राजा को ग्राशीर्वाद दिया। राजा ने शिरोनत होकर उसको स्वीकार किया। एकत्र जनता ने "छत्रपति शिवाजी की जय हो!" के नाद से गगन को गुंजा दिया। बाजे बजने लगे, गायक गाने लगे। पूर्व-नियत प्रबन्ध के ग्रनुसार शिवाजी के सिंहासनारूढ़ होते ही, मराठा-मंडल के सब किलों में तत्क्षण शतघ्नियां (तोपें) ग्रानन्द तथा विजय-सूचक गोले चलाने लगीं। इस समय मुख्य राजपुरोहित गागाभट्ट सुवर्ण-जटित हीरे-मोतियों की मालाग्रों से ग्रलंकृत राजछत्र लेकर ग्रागे बढ़ा ग्रौर शिवाजी को, स्वतन्त्र सर्वाधिकारी राजा के रूप में, 'छत्रपति शिवाजी' की पदवी से ग्रलंकृत किया।

तदनन्तर ब्राह्मणों ने ग्रागे बढ़कर छत्रपति शिवाजी को ग्राशीर्वाद दिए। शिवाजी ने मुक्तहस्त होकर ब्राह्मणों, भिक्षुग्रों ग्रौर साधारण जनता को भारी धनराशि दान में वितरित की।

तदनन्तर ग्रष्टप्रधान-मंडल के मन्त्रियों ने ग्रागे बढ़कर, झुककर शिवाजी को नमस्कार किया। छत्रपति शिवाजी ने उन्हें सम्मान-सूचक वेश-परिधान तथा राजसेवा के नियुक्ति-पत्र के साथ-साथ ग्रनेक प्रकार के पारितोषिक, धन, घोड़े, हाथी, जवाहरात ग्रौर शस्त्र ग्रादि वितरित किए। ग्रष्टप्रधान-मंडल के सब पदों के फारसी नाम बदलकर उनके स्थान पर संस्कृत नाम प्रचलित किए गए। सिंहासन से कुछ नीचे, उच्च स्थान पर, युवराज शम्भाजी, राज-पुरोहित गागाभट्ट ग्रौर प्रधानमन्त्री [illegible] पिंगले ग्रासीन किए गए। शेष मन्त्री [illegible] में श्रेणी-बद्ध होकर खड़े हुए। [illegible] सम्मानपूर्वक [illegible]

इस समय प्रातःकाल के आठ बज गए थे। नीराजी रावजी ने अंग्रेजों के दूत हेनरी ऑक्सिनडन को छत्रपति शिवाजी के सामने उपस्थित किया। उसने यथोचित दूरी से झुककर शिवाजी का सम्मान किया। दुभाषिये नारायण शेणवी ने अंग्रेजों की ओर से शिवाजी को हीरे की अंगूठी भेंट-रूप में अर्पित की। शिवाजी ने दूर-दूर स्थानों से आए हुए दर्शकों को सिंहासन के समीप बुलाया और उन्हें यथोचित पुरस्कार देकर विदा किया।

इसके बाद शिवाजी सिंहासन से उतरे और एक उत्तम साजबाज से अलंकृत घोड़े पर सवार होकर महल के खुले आंगन में पहुंचे। तदनन्तर शिवाजी ने उस अवसर के लिए सुसज्जित हाथी पर सवार होकर सैनिक जुलूस के साथ राजधानी के गली-बाजारों में जनता को दर्शन दिए। इस जुलूस में मन्त्रिमण्डल के साथ-साथ सेनापति भी सम्मिलित थे। जुलूस में दोनों राजपताकाएं—जरी-पताका और भगवा झण्डा—दो हाथियों पर सजाकर रखी गईं। पीछे-पीछे सेनाएं—पदाति, अश्वारोही, तोपवाली और मारूबाजे-वाली—अपने-अपने झण्डों के साथ आ रही थीं। नागरिकों ने समयोचित शान-बान के साथ अपने मकान, मार्ग और अट्टालिकाएं सजाई हुई थीं। देवियों तथा महिलाओं ने आरती उतारकर अक्षय-पुष्प-वर्षा से शिवाजी का हार्दिक अभिनन्दन और स्वागत किया। शिवाजी ने रायगढ़ पर्वत के अनेक देवमन्दिरों का दर्शन किया, और वहां भेंट अर्चना के बाद राजमहल में वापस आए। ७ जून को विविध राजदूतों और ब्राह्मणों को दान दिए गए—यह दान बारह दिनों तक दिया जाता रहा। इन दिनों राजा की ओर से लंगर भी खोले गए। इस दान-यज्ञ में हरएक पुरुष को तीन से पांच रुपये तक दान दिया जाता था। और स्त्रियों, बालकों को एक या दो रुपये दिए जाते थे।

राज्याभिषेक के अगले दिन वर्षाऋतु का प्रारम्भ हो गया और

वर्षा ज़ोरों से होने लगी। उपस्थित दर्शकों तथा अतिथियों को इसके कारण पर्याप्त असुविधा हुई। राज्याभिषेक के दस दिन बाद १८ जून को राजमाता जीजाबाई ने वृद्धावस्था में इस लोक से विदाई ली, मानो पुत्र के राज्याभिषेक को देखने की प्रतीक्षा में ही थीं! पुत्र को राजसिंहासन पर अपने हाथों पराक्रम से स्थापित राज्य का छत्रपति बनते देखकर, जीजाबाई के हृदय में जो अलौकिक आनन्द उत्पन्न हुआ होगा, उसका वर्णन नहीं किया जा सकता।

कर्नाटक की विजय-यात्रा

औरंगज़ेब ने बहादुरखान को शिवाजी और दक्खिनी रियासतों पर अधिकार करने के लिए भेजा। शिवाजी का कोष खाली हो गया था। वे अभी लड़ाइयों में उलझने को तैयार नहीं थे, इसलिए उन्होंने बहादुरखान के पास सन्धि की शर्तें भेजकर उसे सन्धि-चर्चा में लगाए रखा और दूसरी तरफ फोण्ड और कोल्हापुर के किलों पर हमला करके उन्हें अपने अधीन किया। औरंगज़ेब को जब ये समाचार मिले, उसने बहादुरखान को एकदम बीजापुर और शिवाजी पर हमला करने को लिखा। बहादुरखान ने शिवाजी के विरुद्ध उत्तर कोंकण पर कल्याण की ओर से हमला किया। इन्हीं दिनों शिवाजी बीमार हो गए। तीन महीनों तक सतारा में रोगशय्या पर पड़े रहे। मौका देखकर बहादुरखान ने बीजापुर-दरबार में दक्खिनी और अफगानी दलों के वैमनस्य का फायदा उठाकर बीजापुर के विरुद्ध आक्रमण किया। बहादुरखान के इस आक्रमण से बीजापुर-बादशाह का मुख्य अधिकारी बहलोलखां शिवाजी से मिल गया। गोलकुण्डा की कुतुबशाही ने मुगलों के आक्रमण को रोकने के लिए शिवाजी और बीजापुर में सुलह करा दी। बीजापुर-दरबार ने शिवाजी को मुगलों से रक्षा करने के लिए, तीन लाख रुपया और कोल्हापुर का ज़िला देना स्वीकार किया। परन्तु यह सुलह देर तक न टिकी। शिवाजी ने इसकी परवाह नहीं की। उन्होंने अपने राजकोष को पूर्ण करने के लिए कर्नाटक की विजय-यात्रा की तैयारियां कीं और १६७६ ई० में इसके लिए प्रस्थित हुए।

कर्नाटक प्रदेश अपनी अतुल सम्पत्ति के लिए प्रसिद्ध था। अनेक विजेताओं ने समय-समय पर उस प्रदेश की विजय-यात्रा कर अपने राजकोष को पूर्ण किया था।

इक्ष्वाकुवंश के प्रसिद्ध राजा रघु ने भी यहां के पाण्डव राजाओं को अपना करद बनाकर अपने ऐश्वर्य को बढ़ाया था। महाराजा युधिष्ठिर ने भी राजसूययज्ञ करते समय इधर अपने भाई को भेजकर अतुल सम्पत्ति से अपने राजमहलों को परिपूर्ण किया था। अशोक और समुद्रगुप्त भी यहां तक पहुंचे थे। विदेशी अरब-निवासी समय-समय पर इधर हमले करते थे। उत्तर से आनेवाले मुसलमान आक्रान्ताओं में मलिक काफूर व मुहम्मदशाह तुगलक आदि ने भी यहां आक्रमण कर इस प्रदेश की सम्पत्ति को लूटा। परन्तु इन सब आक्रमणों के बाद अब भी यह प्रदेश स्वर्णभूमि माना जाता था। उत्तर भारत के युद्धों तथा गृहयुद्धों के कारण, तथा शिवाजी के दमन के लिए भेजी गई सेनाओं पर व्यय के कारण, औरंगज़ेब का राजकोष खाली हो रहा था। उसने अपने दक्षिणी शासकों को इस प्रदेश को जीतने के लिए आज्ञा दी। गोलकुण्डा की कुतुबशाही पर हमला करने की तैयारियां की जाने लगीं। औरंगज़ेब ने अपने सरदारों को लिखा कि तंजौर में शाहजी का बेटा व्यंकोजी शासन करता है। वह निकम्मा और शक्तिहीन है। उस प्रदेश को जीतकर, वहां पुराने समय से दबे हुए खज़ानों को हासिल करो। इधर शिवाजी ने भी अपना राजकोष भरने के लिए इस प्रदेश पर हमला करने की सोची। लोकाचार की दृष्टि से अपने पिता की जायदाद में अपना भाग लेने की मांग रखी।

औरंगज़ेब और शिवाजी दोनों सम्पत्ति की आशा से कर्नाटक की ओर अपनी सेनाओं की बागडोर मोड़ने की तैयारियां करने लगे। परन्तु औरंगज़ेब अवस्थाओं और परिस्थितियों से जकड़ा हुआ अपनी अभिलाषा को पूर्ण न कर सका। उसकी परखी हुई शक्ति-

शाली सेनाएं पंजाब और उत्तर-पश्चिमी प्रांत में पहाड़ी विद्रोहियों का दमन कर रही थीं। दक्षिण में बहादुरखान के अधीन सेनाएं बीजापुर-सरकार के घरेलू युद्ध में उलझ गई थीं। बहादुरखान बीजापुर-दरबार की पार्टी के साथ मिल गया। स्वयं वह शिवाजी के साथ युद्ध करते-करते थक चुका था। शिवाजी और बहादुरखान, दोनों ने एक-दूसरे पर हमला न करने और एक-दूसरे के शत्रुओं की सहायता तथा कार्यक्षेत्र में हस्तक्षेप न करने का निश्चय किया। शिवाजी ने बीजापुर-दरबार के झगड़ों में भाग न लिया। बहादुरखान उधर स्वेच्छापूर्वक चलता रहा। इस सुलह से शिवाजी के प्रदेश में मुगलाई आक्रमण की आशंका न रही। शिवाजी इन चिन्ताओं से मुक्त हो गए।

शिवाजी के दो प्रतिस्पर्धी

कर्नाटक में शिवाजी के दो प्रतिस्पर्धी थे। एक, उनका अपना भाई व्यंकोजी, जो तंजौर का राजा था। दूसरा, कुतुबशाही का बादशाह। शाहजी ने दीपाबाई के साथ विवाह किया था। व्यंकोजी उसकी सन्तान था। शाहजी की मृत्यु के बाद इधर की सारी जागीर उसीके अधिकार में थी। व्यंकोजी स्वभाव में शिवाजी से उलटा था। वह आरामपसन्द था और महत्त्वाकांक्षा से शून्य था। शाहजी व्यंकोजी के स्वभाव की कमज़ोरी को जानते थे। इसलिए उन्होंने अपने जीवन-काल में ही राजकार्य का संचालन करने के लिए रघुनाथ नारायण हनुमन्ते को प्रधानमन्त्री नियत कर दिया। शाहजी की मृत्यु के बाद रघुनाथ और व्यंकोजी में दिन-प्रतिदिन ईर्ष्या और अनबन बढ़ने लगी। दोनों एक-दूसरे पर दोषारोपण करते थे। एक दिन दरबार में कहा-सुनी हो गई। रघुनाथ ने शिवाजी की आदर्श राजा के रूप में प्रशंसा की और व्यंकोजी को सुस्त, आरामपसन्द और महत्त्वाकांक्षा से शून्य कहकर उसका अपमान किया। व्यंकोजी ने प्रत्युत्तर में

शिवाजी को राजद्रोही एवं विद्रोही कहकर उनकी भर्त्सना की।

इस भर्त्सना से रघुनाथ उत्तेजित तथा अपमानित होकर, नौकरी छोड़कर ग्लानि और प्रतिहिंसा के भाव से बनारस की ओर चल दिया। मार्ग में हैदराबाद में वह कुतुबशाही के प्रधानमन्त्री मदनपन्त से मिला। उसे शिवाजी और कुतुबशाही में मैत्री कराने के लिए प्रेरित किया, और शिवाजी के साथ इस आधार पर सुलह कराने की प्रेरणा की कि कर्नाटक की विजय-यात्रा से जो सम्पत्ति व विजय प्राप्त होगी उसमें उसका भी भाग रहेगा। वहां से रघुनाथ शिवाजी के पास सतारा में गया। वहां जाकर उसने सारी स्थिति शिवाजी के सामने रखी। शिवाजी ने सब अवस्थाओं पर विचार कर यही उचित समझा कि कर्नाटक की विजय-यात्रा से पहले कुतुबशाह के साथ मैत्री स्थापित की जाए, ताकि निश्चिन्त होकर कर्नाटक में विद्रोहियों तथा प्रतिद्वन्द्वियों का दमन किया जाए। दोनों में दोस्ती तथा भेंट कराने का कार्य हैदराबाद के प्रधानमन्त्री मदनपन्त को सौंपा गया।

शिवाजी ने अपने पीछे महाराष्ट्र की राज-व्यवस्था का प्रबंध इस प्रकार से किया—मोरेश्वर त्र्यम्बक पिंगले पेशवा को प्रतिनिधि-राज्याधिकारी नियत किया। अन्नाजी और दत्ताजी त्र्यम्बक को सेना की एक टुकड़ी के साथ राष्ट्र की रक्षा के लिए नियत किया। इन्हीं दिनों १६७६ ई० में नेताजी पालकर दिल्ली में दस वर्ष तक मुसलमान के रूप में रहकर महाराष्ट्र में वापस आया था। उसकी शुद्धि की गई और उसे मराठा सेना में महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया।

हैदराबाद में शिवाजी का राजसी जलसा

शिवाजी और कुतुबशाह में सन्धि हो गई थी। शिवाजी ने प्रह्लादजी नीराजी को कुतुबशाह के दरबार में अपना राजदूत नियत किया। शिवाजी ने लिखा कि तुम बादशाह हसन कुतुबशाह के साथ मेरी मुलाकात का प्रबन्ध करो। पण्डित मदनपन्त ने भी दोनों की दोस्ती को पक्का करने के लिए भेंट का होना आवश्यक समझा। उसने भी बादशाह को इसके लिए बार-बार प्रेरित किया।

अफजलखान का वध, शायस्ताखान पर आक्रमण तथा औरंगज़ेब के कारावास से निकल आने की कहानियां उसने सुनी थीं। उनको दृष्टि में रखते हुए उसे शिवाजी पर विश्वास न आता था। वह डरता था कि पता नहीं भेंट में क्या हो। परन्तु पण्डित मदनपन्त और प्रह्लादजी नीराजी ने बादशाह को शपथपूर्वक इस विषय में भय की आशंका से मुक्त किया। बादशाह कुतुबशाह ने भेंट करना स्वीकार कर लिया। जनवरी, १६७६ ई० में रायगढ़ से शिवाजी भेंट के लिए प्रस्थित हुए। मराठी सेना के सत्तर हज़ार सिपाहियों को सख्त ताकीद की कि कोई लूटमार न करे। बाजारों में सब सामान पैसे खर्च ...के खरीदें। कुछएक सिपाहियों ने आज्ञा भंग की। उन्हें अंगच्छेद ...की सजा देकर सब सिपाहियों को सावधान और सतर्क ... १६७७ ई० को शिवाजी हैदराबाद जा पहुंचे। कुतुबशाह ...ने हैदराबाद से आगे आकर अगवानी करने का

प्रस्ताव किया। शिवाजी ने कहला भेजा कि तुम मेरे बड़े भाई हो, तुम्हें अपने छोटे भाई का स्वागत करने के लिए आगे आना शोभा नहीं देता। सुलतान हैदराबाद में रहा। उसके मंत्री मदनपन्त ने प्रतिष्ठित नागरिकों के साथ शहर से आगे बढ़कर शिवाजी का स्वागत किया और उन्हें हैदराबाद में प्रविष्ट कराया।

हैदराबाद नगर अनेक प्रकार से सजाया गया। बाजार तथा गलियां फूलों से सजाई गई थी। अट्टालिकाओं पर देवियां राज-अतिथि का स्वागत करने के लिए इकट्ठी हुईं। वन्दनवार-पताकाएं स्थान-स्थान पर लहराई गईं। शिवाजी ने अपने सीधे-सादे वेशवाले सिपाहियों तथा सेनापतियों को समयोचित वेशभूषा से अलंकृत होने की आज्ञा दी। जंगली पहाड़ी सिपाही, अयोध्या-प्रदेश के समय रावण को जीतनेवाली राम-सेना की भांति, मोती से जड़ी पोशाकों में, सजे हुए घोड़ों पर सवार हो गए।

हैदराबाद के नागरिक इन अनेक युद्धों के विजेता, मुगल बादशाही को आमूलचूल जीर्ण-शीर्ण करनेवाले सिपाहियों और घुड़सवारों को आश्चर्यचकित निगाहों से देखते थे। बीच-बीच में दक्खिनी ब्राह्मण भी अपनी ऊंची, बड़ी-बड़ी भौंहों और गहरी आंखों तथा तिलक-छाप से अंकित मस्तकों के साथ अपनी योग्यता के कारण नागरिकों की दृष्टि में विशेष कौतुक पैदा कर रहे थे।

परन्तु इन सबसे बढ़कर हैदराबाद के हरएक नागरिक दर्शक की दृष्टि इन अतिथियों की चमत्कारी आत्मा पर केन्द्रित हो रही थी। मंत्रियों और सेनापतियों के चमकते हुए गिरोह के बीच में एक छोटे-से कद का अश्वारोही पिछले दिनों की बीमारी और तीन सौ मील की लम्बी यात्रा के श्रम के कारण कुछ क्षीण और थका हुआ—अपनी दायीं-बायीं ओर दृष्टिपात करती हुई चमकती आखों, और स्वाभाविक स्मिति-विकसित चेहरे, और लम्बी, आगे से झुकी हुई नाक से जनता को अपनी ओर आकृष्ट कर रहा था। शहर के जिस-

जिस स्थान पर वह अश्वारोही पहुंचता, एकत्र नागरिक 'शिवा छत्रपति की जय' के नारों से आकाश को गुंजाते हुए रजत-सुवर्ण की पुष्पवर्षा द्वारा उसका अभिवादन करते। स्थान-स्थान पर अट्टालिकाओं पर बैठी हुई महिलाएं उतरकर राज-अतिथि को रोक-कर आरती उतारतीं एवं संगीत द्वारा हार्दिक आशीर्वाद से उसे अभिनन्दित करतीं। शिवाजी ने भी उस स्वागत-अभिनन्दन का उत्तर मुक्तहस्त से सोने-चांदी की वर्षा द्वारा दिया। स्थान-स्थान पर मुख्य नागरिकों को कीमती वेश-भूषा देकर उनका सम्मान किया।

शाही अतिथियों का जलूस दाद-महल (न्याय-प्रासाद) के पास पहुंचा। महल के द्वार के पास सब रुक गए। शिवाजी अपने पांच चुने हुए राज्याधिकारियों के साथ महल की सीढ़ियों पर चढ़ते हुए सिंहासन-भवन में पहुंचे। कुतुबशाह ने आगे बढ़कर शिवाजी का आलिंगन किया और उन्हें राजसिंहासन पर अपने साथ बिठाया। प्रधानमंत्री मदनपन्त भी बैठ गए। शेष सब खड़े रहे। शाही घराने की देवियां, चिकों में से आश्चर्य के साथ सारे दृश्य को देख रही थीं। तीन घण्टों तक दोनों बादशाह आपस में मैत्री का वार्तालाप करते रहे। एक-दूसरे का स्वागत-अभिवादन किया गया। कुतुबशाह ने शिवाजी से उनकी आपबीती व जगबीती की रोमांचकारी घटनाएं सुनीं। अफजलखां का वध, शायस्ताखां पर हमला, औरंगजेब को खुले दरबार में ललकारना, वहां से वापस महाराष्ट्र में आना— कुतुबशाह जैसे आरामपसन्द राजा के लिए ये सब घटनाएं अनोखी और चमत्कारी थीं। वह दांतों में उंगली देकर स्तम्भित हुआ इनको सुनता रहा। शिवाजी का वैयक्तिक जादू उसपर छा गया। उसने हीरे, जवाहरात, घोड़े-हाथियों द्वारा शिवाजी तथा उनके प्रमुख राज्याधिकारियों का स्वागत किया। कुतुबशाह ने पारस्परिक मैत्री को दृढ़ करने के लिए शिवाजी के मस्तक पर सुगन्धित चन्दन-चर्चित किया और अपने हाथ से पान का बीड़ा देकर स्वयं महल की

सीढ़ियों तक जाकर उनको विदा किया।

इसके बाद कुतुबशाह ने निश्चिन्तता और शान्ति की सांस ली। उसे शिवाजी की सचाई पर विश्वास हुआ। मराठा राजदूत के आश्वासन के सत्य प्रमाणित होने पर उसकी प्रशंसा की गई और उसे अनेक प्रकार के उपहार पारितोषिक रूप में दिए गए। इसके बाद दोनों पक्षों में परस्पर अनेक प्रकार के स्वागत-उपचार होते रहे।

साथ ही सन्धि की शर्तें भी तय हो गईं। दोनों ने मुगलों के विरुद्ध पारस्परिक सुरक्षा के लिए शपथपूर्वक प्रतिज्ञा की। कुतुबशाह ने अपने तोपखाने का कुछ भाग भी दिया। प्रतिफल में, विजय में कुतुबशाह को यथोचित भाग देने का निश्चय किया गया। शिवाजी एक महीने तक हैदराबाद में रहे। शर्तें पूरी होने के साथ-साथ आमोद-प्रमोद भी होते रहे। कहा जाता है कि एक बार कुतुबशाह ने शिवाजी से पूछा कि तुम्हारे पास कितने प्रसिद्ध हाथी है? शिवाजी ने सुगठित मावला सिपाहियों की ओर संकेत करके कहा कि 'ये मेरे हाथी हैं।' एक दिन मावला सरदार येसाजी कंक का कुतुबशाह के मस्त हाथी के साथ मल्लयुद्ध रचा गया। येसाजी ने कुछ समय तक तलवार द्वारा हाथी की रोकथाम की, तदनन्तर तलवार के वार से उसकी सूंड काटकर वहां से भगा दिया।

इसके बाद शिवाजी श्रीशैल आदि तीर्थस्थानों पर यात्रा करते हुए तंजौर पहुंचे। श्रीशैल के आध्यात्मिक वातावरण में शिवाजी संसार के झंझटों से उपरत हो गए और अपने शरीर-त्याग के लिए श्रीशैल को सर्वोत्तम स्थान समझकर भवानी की सेवा में अपने सिर की भेंट करने का संकल्प कर लिया। मंत्रिमण्डल के सदस्यों को जब इसका पता चला तो उन्होंने एकदम शिवाजी को राजधर्म का उपदेश देते हुए इस कार्य से रोका। यहां शिवाजी ने श्रीगणेश नाम का घाट बनवाया।

यहां से विदा होकर शिवाजी अप्रल, १६७७ ई० में अनेक स्थानों से भेंट आदि लेते हुए जिंजी, तिरवाड़ी आदि स्थानों को अधीन करते हुए त्रिचनापली पहुंचे। यहां रघुनाथ पन्त की मध्यस्थता द्वारा मदुरा के राजा नायक के साथ छः लाख हूण लेकर सुलह की।

शिवाजी और व्यंकोजी में भेंट

शिवाजी ने अपने भाई व्यंकोजी के साथ भेंट करने के लिए दूतों के द्वारा उसके पास संदेश भेजा। शिवाजी द्वारा जीवन-रक्षा का आश्वासन मिलने पर, व्यंकोजी दो हजार घुड़सवारों के साथ जुलाई मास में तिरुमलवाड़ी में आया। दोनों भाइयों ने आठ दिन तक वहां पारस्परिक अभिनन्दन-स्वागत किए। इसके बाद शिवाजी ने अपनी पैतृक सम्पत्ति में से ३/४ भाग व्यंगकोजी से मांगा। व्यंकोजी ने देने से इन्कार किया। इसपर शिवाजी ने उसको सुस्त, निकम्मा और उत्साहशून्य होने के लिए भर्त्सना की। इसपर उस रात को व्यंकोजी वहां से जगन्नाथ आदि मन्त्रियों के परामर्श से भाग गया। शिवाजी को जब यह पता लगा तो बहुत क्रोधित हुए। उन्होंने उन मन्त्रियों को गिरफ्तार कर लिया। अगले दिन खुले दरबार में कहा कि मैं व्यंकोजी को गिरफ्तार करने नहीं आया, परन्तु इन मन्त्रियों ने उसे भाग जाने की सलाह देकर मुझे बेईमान घोषित करने का कार्य किया है। मैं तो केवल पैतृक सम्पत्ति में से अपना भाग मांगने आया था, यदि वह नहीं देना तो न दे। व्यंकोजी मूर्ख है।

इसके बाद उन मन्त्रियों को भेंट-उपहार के साथ तंजौर भेज दिया। साथ ही तंजौर का प्रदेश जीतने का विचार छोड़ दिया। शेष कर्नाटक का प्रदेश अपने अधीन कर शिवाजी तीर्थयात्रा करते हुए, मैसूर आदि प्रदेशों पर अपना प्रभाव अंकित करते हुए, सन् १६७८ ई० में महाराष्ट्र वापस आए। कर्नाटक की विजय-यात्रा ने शिवाजी का यश दिग्दिगन्त में फैला दिया।

शिवाजी की औरंगज़ेब के नाम चिट्ठी

कर्नाटक-विजय-यात्रा से महाराष्ट्र वापस आने पर शिवाजी ने राष्ट्र की राजनैतिक स्थिति का सिंहावलोकन किया। बीजापुर की आदिलशाही, कुतुबशाही के राजवंश क्षीण हो रहे थे। मुगल-सेनापति उन्हें हथियाने के लिए कई प्रकार के षड्यन्त्र रच रहे थे। कभी उन्हें आपस में लड़ाते थे, उनमें पारस्परिक युद्ध पैदा करते थे, कभी उन्हें मराठों के विरुद्ध उत्तेजित करते थे, और कभी मराठों को उनके विरुद्ध। इन षड्यन्त्रों के साथ-साथ औरंगज़ेब ने 'जजिया' नाम का कर हिन्दुओं पर लगाने की घोषणा कर दी थी। इससे दक्षिण में मुगलाई प्रदेशों की हिन्दू जनता 'त्राहि-त्राहि' करने लगी। ऐसे समय (१६७६ ई०) में शिवाजी ने औरंगज़ेब के नाम निम्नलिखित चिट्ठी लिखवाई। इस चिट्ठी से शिवाजी की उदारता, दूरदर्शिता तथा आत्मविश्वास की झलक पद-पद पर प्रकट होती है। यह पत्र आज भी भारत की हिन्दू-मुसलिम जनता के लिए मार्ग-दर्शक हो सकता है। आज भी कुतुबशाह और शिवाजी—मुसलमान और हिन्दू—भिन्न-भिन्न मजहबों में रहते हुए भी राजनैतिक स्वरवों की दृष्टि से एक प्लेटफार्म पर एकत्रित हो सकते हैं। दिल्ली की राजगद्दी के अत्याचार सबके लिए समानरूप से होते हैं। यही सचाई उन दिनों शिवाजी, गोलकुण्डा और बीजापुर की बादशाहियों द्वारा साथ-साथ अनुभव की जा रही थी। परन्तु दिल्ली के आलमगीर ने जनता के आराम की अपेक्षा, अपनी महत्त्वाकांक्षा और प्रतिष्ठा कायम रखने के उद्देश्य से राजकोष भरने के लिए जजिया लगाने में भी संकोच

नहीं किया।

श्री यदुनाथ सरकार द्वारा लिखित 'औरंगजेब' पुस्तक में प्रकाशित अंग्रेजी भाषा में अनुवादित पत्र का हिन्दी अनुवाद नीचे दिया जाता है—

"शाहंशाह आलमगीर औरंगजेब की सेवा में—

"शिवाजी आपका सदा दृढ़ हितेच्छु है। परमात्मा की कृपा और आपकी मेहरबानियों के लिए आपका धन्यवाद करता है। यद्यपि मुझे प्रतिकूल दैव के कारण आपको बिना मिले आपके दरबार से अचानक आ जाना पड़ा, तथापि मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि मैं आज भी एक कृतज्ञ सेवक की भांति आपकी सेवा करने के लिए कटिबद्ध हूं।

"मैंने सुना है कि मेरे साथ जो आपके युद्ध हुए हैं उनके कारण आपका शाही खजाना खाली हो गया है, इसलिए आपने उस खजाने को पूरा करने के लिए हिन्दुओं पर जजिया नाम का 'कर' लगाने की आज्ञा जारी की है। आपको मालूम है कि इस बादशाही का निर्माण जलालुद्दीन अकबर ने किया था। उसने बावन साल तक राज्य किया। इस काल में उसने 'सुलह-ए-कुल' नीति स्वीकार की थी। उसके राज्यकाल में क्रिश्चियन, यहूदी, मुसलिम, दादू, फलकिया, मलाकिया, अनासरिया, दहरिया, ब्राह्मण, जैन—सभी परस्पर प्रेमपूर्वक रहकर अपने-अपने धर्मों का पालन करते थे। अकबर की शासन-नीति का उद्देश्य इन सबकी रक्षा करना था। इसीलिए उसका नाम 'जगद्गुरु' प्रसिद्ध हुआ। उसके बाद जहांगीर ने बाईस साल तक और शाहजहां ने बत्तीस साल तक इसी नीति के अनुसार शासन कर अपने-अपने नाम अमर किए। दोनों बादशाह सबके प्रिय और न्यायकारी समझे जाते थे। इन तीनों बादशाहों के शासनकाल में सल्तनत की सम्पत्ति और ऐश्वर्य चरमसीमा तक पहुंचा। नये-नये प्रदेश और नये-नये किले इनके राज्य में सम्मिलित हुए। छोटे-बड़े

सब लोग आराम से शान्तिपूर्वक स्वतन्त्रता का जीवन व्यतीत करते थे। सब लोग इनकी प्रशंसा करते हुए नहीं थकते थे।

"परन्तु आपके शासनकाल में कई किले और कई सूबे मुगलाई बादशाहत से अलग हो गए हैं, और कई सूबे और किले अलग होनेवाले हैं। मेरी तरफ से आपकी सल्तनत को तहस-नहस करने और सूबों तथा किलों को छीनने में कोई कसर न रहेगी।

"आपके इलाकों में कृषक लोग पददलित हो रहे हैं। ज़मीनों की फसलें कम हो रही हैं। लाखों रुपयों के स्थान पर हज़ारों और हज़ारों के स्थान पर दस वसूल किए जाते हैं और वह भी बड़ी दिक्कत के साथ! जब शाहंशाह और उसके शाहज़ादों के महलों में निर्धनता और भिखारीपन प्रवेश कर चुके हैं, तो इससे सरकारी अफसरों तथा हाकिमों की अवस्था का अनुमान लगाया जा सकता है। आपके शासनकाल में राज्य की फौजों में असन्तोष बढ़ रहा है। व्यापारी असुरक्षा के कारण शिकायतें करते हैं, मुसलमान चिल्ला रहे हैं, हिन्दू पीसे जा रहे हैं। सैकड़ों लोग रात को भूखे सोते हैं, दिन में निराश हो भाग्य को रोते हैं।

"पता नहीं आप किस शाही ख्याल में, जनता की इन तकलीफों को 'जज़िया कर' लगाकर और भी बढ़ा रहे हैं! आपके इन कारनामों से आपकी बदनामी पूर्व से पश्चिम तक फैल जाएगी और इतिहास की पुस्तकों में दर्ज किया जाएगा कि किस प्रकार हिन्दुस्तान के बादशाह औरंगज़ेब आलमगीर ने राजकोष भरने के लिए भिखारियों के पेट काटकर, ब्राह्मण और जैनी फकीरों से 'जज़िया कर' वसूल किया। आप दुर्भिक्ष-पीड़ित भूखे भिखारियों पर अपना बल प्रयोग करके तैमूर वंश के नाम को मटियामेट कर रहे हैं।

"बादशाह सलामत! यदि आप ईश्वरीय किताब कुरान में विश्वास रखते हैं, तो वहां देखिए, वहां परमात्मा को 'रब्बे उल-आलमीन' (मनुष्य-मात्र का मालिक) कहा है, केवल मुसलमानों का

मालिक (रब्बे-उल-मुसलमीन) नहीं कहा। यथार्थ में हिन्दू धर्म और इस्लाम एक-दूसरे के प्रतिरंजक पूरक हैं। परमात्मा ने मनुष्य जाति के भिन्न-भिन्न रूप-रंग की रेखाओं को पूरा करने के लिए इस्लाम और हिन्दू धर्म का प्रयोग किया है। यदि पूजास्थान मसजिद है, तो वहां परमात्मा की स्मृति में आयतें गाई जाती हैं। यदि पूजास्थान मंदिर है, तो वहां परमात्मा के दर्शनों की उत्कंठा में घंटे-घड़ियाल गुंजाए जाते हैं। किसी मनुष्य के धार्मिक विश्वास और कर्मकाण्ड के लिए अन्धश्रद्धा तथा असहिष्णुता का प्रदर्शन करना 'इस्लामी पुस्तक' की आज्ञाओं को बदलना है। नई-नई बातें तथा प्रथाएं जारी करना दिव्य चित्रकार की कृति में दोष दिखाने के बराबर है।

"न्याय की दृष्टि से 'जजिया कर' किसी भी दशा में नियमानुकूल नहीं कहा जा सकता। राजनैतिक दृष्टि से यह 'कर' लगाया जा सकता है, यदि आपके राज्य में ऐसा प्रबन्ध हो कि एक सुन्दर युवती सोने के गहनों से अलंकृत एक प्रान्त से दूसरे प्रान्त तक बिना किसी भय और बलात्कार के आ-जा सके। परन्तु इन दिनों तो बड़े-बड़े आबाद शहर लूटे जा रहे हैं। असुरक्षित खुले देहातों का तो कहना ही क्या! 'जजिया कर' जहां न्याय की दृष्टि से अनुचित है, वहां भारतवर्ष के इतिहास की परम्पराओं की दृष्टि से यह एक नई अनोखी बात है। यह 'कर' सामयिक स्थिति की दृष्टि से अनुचित और अनावश्यक है।

"यदि आप जनता पर अत्याचार करना और हिन्दुओं को भयभीत करना अपना धार्मिक कर्तव्य समझते हैं तो आपको साधारण जनता से यह 'कर' वसूल करने से पहले मेवाड़ के राणा राजसिंह से यह जज़िया वसूल करना चाहिए। राणा राजसिंह हिन्दुओं के शिरोमणि महाराणा हैं। तब आपके लिए मुझसे यह 'कर' वसूल करना कठिन न होगा, क्योंकि मैं आपका अपना सेवक हूं। परन्तु चींटियों

शि—८

ग्रौर मक्खियों का शिकार करना ग्राप जैसे बलवान शक्तिशाली व्यक्तियों को शोभा नहीं देता।

"मुझे ग्रापके नौकरों तथा ग्रफसरों की निराली ईमानदारी एवं राजभक्ति पर ग्राश्चर्य होता है, कि वे ग्रापके सामने ग्रसली वस्तु-स्थिति को रखने में भारी लापरवाही कर रहे हैं। वे जलती हुई ग्राग पर तिनके ग्रौर भूसा डालकर भी उसकी लपटों को ग्रापके सामने प्रकट नहीं होने देते। मैं परमात्मा से प्रार्थना करता हूं कि वह ग्रापको सुबुद्धि दे, जिससे ग्रापका शहंशाही सूर्य परम्परागत महिमा के क्षितिज के ऊपर सदा चमकता रहे!"

छत्रपति शिवाजी की जय

कर्नाटक से वापस आते हुए शिवाजी बेलगाम में बलवाडी ग्राम में पहुंचे। यहां की सावित्रीबाई नाम की जमींदारिन देवी ने शिवाजी की सेना के कुछ बैल लूटे थे। मराठा सिपाहियों ने उसका किला घेर लिया। सत्ताईस दिन तक वह वीरांगना स्वयं लड़ती रही। उसने मराठा सिपाहियों की एक न चलने दी। अन्ततः मराठा सिपाहियों ने हमला किया और सावित्रीबाई पराजित होकर किले से भाग निकली। शिवाजी के सेनापति सक्खुजी गायकवाड़ ने उसे गिरफ्तार कर लिया और उसका भारी अपमान किया। शिवाजी के पास यह समाचार पहुंचा। एकदम सक्खुजी गायकवाड़ को गिरफ्तार किया गया। शत्रु महिला पर किए गए अत्याचार को न सहकर, शिवाजी ने मातृशक्ति के प्रति सम्मान प्रकट कर, मित्र एवं शत्रु की दृष्टि में राजमाता जीजाबाई के यश को दिग्दिगन्त में चिरस्थायी कर दिया!

शिवाजी को समाचार मिला कि उसके पुत्र शम्भाजी ने एक ब्राह्मण विवाहिता देवी पर बलात्कार कर उसका सतीत्व नष्ट किया है। शिवाजी इससे पहले भी शम्भाजी की स्वेच्छाचारिता की बातें सुन चुके थे। शिवाजी को सार्वजनिक कामों में लगे रहने के कारण शम्भाजी की देखभाल करने का अवसर भी न मिला। इसके विपरीत समय-समय पर मुगल-दरबार के दरबारियों के संग में रहने से, मुगल-सेनापतियों के साथ आमोद-प्रमोद का अवसर मिलने से शंभाजी व्यसनी हो गया था। मुगल बादशाह का इसमें ..ं था कि वह शिवाजी के उत्तराधिकारी को शिवाजी की भांति

शक्तिशाली, आत्माभिमानी, तपस्वी और संयमी न बनने दे। शिवाजी शम्भाजी की इन कमियों को जानते थे। इसीलिए अपनी उपस्थिति में वे शासनतंत्र में शम्भाजी को दायित्व का कार्य न देते थे। इस बलात्कार की घटना ने शिवाजी के मन्यु को प्रदीप्त किया। पितृ-मोह और राज-कर्तव्य में से शिवाजी ने राज-कर्तव्य पालन किया और शम्भाजी को पन्हाला के किले में नजरबन्द कर दिया। मौका देखकर शम्भाजी अपनी धर्मपत्नी येसूबाई को लेकर कुछ साथियों के साथ किले में से भाग निकला। मुगल-सेनापति दिलेरखान ने रक्षक-सेना भेजकर उसका सूपा से आठ मील की दूरी पर कारकम्य स्थान पर अभिनन्दन किया। औरंगज़ेब को इसकी सूचना दी गई। उसने शम्भाजी को राजा का खिताब देकर सात हजार की हैसियत दी, और एक हाथी भेंट किया।

शिवाजी समय-समय पर दूत भेजकर शम्भाजी को समझाते रहे। उसे सन्मार्ग पर लाने की कोशिश भी की। दिलेरखान बीजापुर पर हमला कर रहा था। उसने मार्ग में अथनी नाम की व्यापारी मण्डी को भस्मसात् कर दिया। वहां के हिन्दू नागरिकों को बाजार में बेचने का निश्चय किया गया। शम्भाजी ने इसका विरोध किया, परन्तु उसकी कुछ न चली। मौका देखकर २० नवम्बर, १६८० को शमाजी अपने साले महादजी निम्बालकर की भर्त्सना पर, तथा स्वाभिमान को लगी ठेस के कारण उद्विग्न एवं खिन्न होकर मुगलों के शिविर (कैम्प) में से अपनी धर्मपत्नी येसूबाई को मर्दाना वेश पहनाकर निकल भागा और बीजापुर जा पहुंचा। वहां मसूद ने उसका स्वागत किया। दिलेरखान ने पीछा किया, परन्तु शम्भाजी एकदम शिवाजी के भेजे हुए घुड़सवारों के साथ पन्हाला पहुंच गया।

शिवाजी ने शम्भाजी को बहुत समझाया। उन्होंने उसके सामने कर्तव्य-पालन तथा लोकसेवा के आदर्श रखे। उसकी धार्मिक भावनाओं को जगाया। अपना संचित राजकोष तथा दूर-दूर स्थानों से

आए हुए सम्मानपत्र दिखाए और उसे प्रेरित किया कि वह अपने वंश का, जाति का व धर्म का ख्याल रखे। उसे राज्य का उत्तराधिकारी होने के नाते कर्तव्य-पालन के लिए प्रेरित किया। महाराणा प्रतापसिंह की भांति शिवाजी को जीवन-भर स्वातंत्र्य-युद्धों में अपराजित होते हुए भी, अन्त समय में पुत्र के भावी जीवन की चिंता के साथ राज्य की चिंता भी थी।

इन्हीं दिनों मानसिक आंधियों और चिंताओं के साथ-साथ शिवाजी ज्वर और डोसेंट्री (लहू के दस्त) की बीमारी से पीड़ित हो गए। बारह दिन तक बीमार रहे। धीरे-धीरे मृत्यु के चिह्न प्रकट होने लगे। जीवन की आशा छूट गई। शिवाजी ने भी स्वयं इसका अनुभव किया। कई बार बीच में मूर्च्छा भी छा जाती थी। बाल-सखा, वीर-सखा, युद्ध-सखा, अष्टमण्डल के दरबारी, शिवाजी के पास आते-जाते और अपने सम्राट के अन्तिम दर्शन समझकर विलाप करते। शिवाजी मृत्यु की सांस में भी उन्हें ढाढ़स बंधाते और बलिदान, त्याग और पारस्परिक सहयोग से निर्माण किए गए राष्ट्र की रक्षा के लिए कटिबद्ध होने की प्रेरणा करते। शिवाजी को अनेक बार खूनी घातक वारों से बचानेवाले उनके शरीर-रक्षक, मृत्यु के सामने अपनी तथा अपने सम्राट की बेबसी को अनुभव कर रहे थे। उसके अटल नियमों के सामने किसीकी न चली। कोई भी मृत्यु के वार को न रोक सका। रविवार, ५ अप्रैल, १६८० ई०, चैत्र मास की पूर्णिमा के दिन दोपहर को शिवाजी तिरेपन वर्ष की आयु में सदा के लिए सो गए। उस गहरी नींद में लीन हुए जिससे कोई किसीको जगा नहीं सकता। शिवाजी के अन्तःपुर और मराठा-मंडल ने इस समाचार को दुःख और चिन्ता के साथ सुना। लगातार परिश्रम, दो बार की लम्बी बीमारी तथा शम्भाजी के भावी जीवन की चिन्ता के कारण जीवन के अन्तिम दिनों में शिवाजी का तन व मन थक चुका था। प्रकृति के नियम के अनुसार अब विश्राम

लेना ही स्वाभाविक था।

शिवाजी अपने यौवनकाल में भयकर सघर्ष में उलझे रहे। परमात्मा की लाड़ली, सौभाग्यशाली जातियों को ही शिवाजी जैसे प्रतिभाशाली नेता प्राप्त होते हैं। भारतीय आर्यजाति का सौभाग्य था कि उसे शिवाजी जैसा नेता मिला। उन्होंने आर्यजाति को पराजित स्थिति से निकालकर अपने पैरों पर, आत्मगौरव के शैल पर, पुनः खड़ा किया और अत्याचारों का मुकाबला करने के लिए कटिबद्ध किया। शिवाजी ने अपने अलौकिक प्रतिभाशाली व्यक्तित्व के द्वारा भारतवर्ष में नवयुग का प्रारम्भ किया। नई परिस्थितियों में नये युग का निर्माण क्रांतिकारी व्यक्ति ही कर सकते हैं। ऐसे व्यक्ति ही नई परिस्थितियों का मुकाबला करने के लिए नये साधन जुटा सकते हैं। शिवाजी के प्रादुर्भाव के समय भारतवर्ष में नई दुनिया बन रही थी।

राजनैतिक क्षेत्र में भारतवासी धर्मयुद्ध करने के अभ्यासी थे। परन्तु विदेशों से आनेवाले आक्रान्ता छलयुद्ध करने में सकोच न करते थे। राजपूतों ने छलयुद्ध का मुकाबला धर्मयुद्धों से करना चाहा। वे सफल न हो सके। उन्हें मैदान छोड़ने पड़े। विदेशी प्रबल होते गए। शिवाजी ने परिस्थितियों के अनुसार विदेशियों के छल-युद्धों का मुकाबला करने के लिए सदाचार और आर्य-राजनीति पर आश्रित मायायुद्धों के करने में संकोच नहीं किया। वर्तमान् युग में आर्य-धर्म के प्रवर्तक ऋषि दयानन्द ने भी इन शब्दों में इसका उपदेश किया है—

"इस प्रकार लड़ना कि जिससे निश्चित विजय होवे, आप बचे। जो भागने से वा शत्रुओं को धोखा देने से जीत होती हो तो ऐसा ही करना।" (सत्यार्थप्रकाश तृतीय समु०, क्षात्रधर्म।)

मुगलों ने तोपों की सहायता से भारतीय राजवशों को युद्ध में पराजित करना शुरू किया। शिवाजी ने तोपों का मुकाबला करने के

लिए तोपखानों का संग्रह किया। शिवाजी के समय में ही यूरोपियन जातियों—डच, अंग्रेज, पुर्तगाली आदि ने जहाज़ों द्वारा युद्ध करने की प्रथा शुरू की। शिवाजी ने भी उनके मुकाबले में अपने जहाज तथा समुद्री बेड़े तैयार किए। आवश्यकतानुसार रूढ़ियों के बदलने में संकोच नहीं किया। इसीलिए यूरोपियन लोग शिवाजी के जीते-जी उनके मुकाबले में खड़े न हो सके और उनसे भयभीत होते रहे। शिवाजी का इन यूरोपियन लोगों पर भारी आतंक था।

भारत की प्राचीन परम्परा के अनुसार युद्ध करने का काम क्षत्रियों का है, परन्तु शिवाजी ने सामायिक आवश्यकताओं को अनुभव करते हुए शस्त्र बांधने तथा युद्ध में सिपाही बनकर आगे आने का अवसर प्रत्येक राष्ट्रभक्त को दिया। शिवाजी के साथ स्वतन्त्रता-युद्ध में भाग लेनेवाले व्यक्ति किसी एक श्रेणी-विशेष के न थे। उनकी सेना में, उनके राष्ट्रीय कार्य-कर्तृ मंडल में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र सबको बराबर अवसर दिया जाता था। उन्होंने राष्ट्र-सेवा के काम में जन्मगत जात-पांत के भेदों की परवाह नहीं की। इसीलिए वे सदा विजयी रहे। शिवाजी की मृत्यु के बाद पेशवा इस नीति का पालन न कर सके, इसीलिए वे चिरकाल तक अपनी स्वाधीनता कायम न रख सके।

शिवाजी ने यथाशक्ति परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तन किए। परन्तु जहां तक उनके पारिवारिक जीवन का सम्बन्ध है, शिवाजी एक समय में बहुविवाह की प्रथा को न तोड़ सके। इसके अनेक कारण थे। यदि शिवाजी ने महाराजा रामचन्द्र की भांति एकपत्नीव्रत का पालन किया होता तो उनकी मृत्यु के बाद छत्रपति का राजवंश घरेलू झगड़ों में न उलझता। शिवाजी का यह दोष उनके गुणों की रश्मियों में चन्द्रमा में कलंक की भांति लुप्तप्राय है।

छत्रपति शिवाजी की जीवन-कथा का पारायण करने के बाद वर्तमान भारत-निवासियों के सामने यह प्रश्न उपस्थित होता है कि यदि आज शिवाजी जीवित होते तो वे भारत की वर्तमान राजनीतिक

पहेलियों को सुलझाने के लिए क्या करते ?

इसका विस्तृत उत्तर अप्रासंगिक होगा। इसका उत्तर देने के लिए हम इस कथा का पारायण करनेवाले हरएक श्रोता व पाठक के सामने निम्नलिखित प्रश्न उपस्थित करते हैं—

यदि आप शिवाजी के समय में जीवित होते तो आप उस समय क्या करते ?

इस प्रश्न के उत्तर में ही प्रथम प्रश्न का उत्तर आ जाता है। इस जीवन-चरित्र को पढ़कर अपने-आपको शिवाजी और उनके बाल-सखाओं की स्थिति में रखने का यत्न कीजिए।

छत्रपति शिवाजी ने आत्मबलिदान द्वारा आर्यजाति के सामने विजय का संदेश रखा। आज मित्र व शत्रु सभी शिवाजी की राजनीति, कुशलता और मौलिकता का सिक्का मान रहे हैं। शिवाजी भारतीय जनता के आराध्यदेव बन चुके हैं। आत्मबलिदान करनेवाले शिवाजी की स्मृति को अमर बनाने के लिए हमें जनता की सेवा का व्रत हृदयों में धारण करना चाहिए। वही सच्चा शिवसंकल्प हमें शांति और कल्याण प्राप्त कर सकता है।

○○○

मुद्रक : विजय भारती प्रेस, शाहदरा, दिल्ली-१२